पांच बरस लम्बी सड़क

पांच बरस लम्बी सड़क

अनुवादिका
शान्ता

मूल्य चार रुपये पचास पैसे

पहला संस्करण १९६९

PANCH BARAS LAMBI SARAK Amrita Pritam
Fi tion Rs 4 50

क्रम
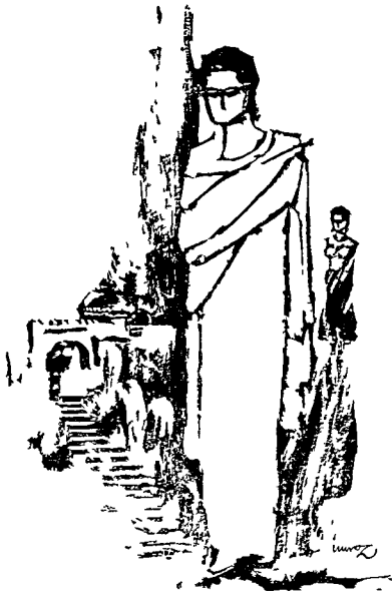
यात्री

औरत दुनिया की सबसे बडी स्मगलर है। मर्द कुछ भी करे, सिर्फ गाजे और अफीम जैसी चीजे ही स्मगल कर सकता है। ज्यादा से ज्यादा सोना स्मगल कर सकता है, या सरकारी भेद जैसी कोई चीज, बस इससे ज्यादा कुछ नही। पर औरत इन्सान के समूचे अस्तित्व को स्मगल कर सकती है। जब तक स्मगलिंग का माल छुपा सकती है, कोख मे छुपाए रखती है, जब नही छुपा सकती, बता देती है, दिखा देती है—और वह भी किसी शर्मिन्दगी के साथ नही, बडे मान के साथ—स्मगलिंग के कसब का हक कहकर। हक कहकर भी नही एहसान कहकर।—इन्सान पर इन्सान के वश को चलाए रखने का एहसान कहकर।

मेरी मा ने मेरे बाप पर यही एहसान करने के लिए भगवान् से एक बेटा मागा था—पहले हकीमो की दवाइयो से मागती थी, फिर फकीरो की जडी-बूटियो से, फिर अडोसन-पडोसन के बताए हुए जादू-टोने से, फिर करामाती कहे जाते पीरो-फकीरो की कबरो से, और फिर शिवजी के इस मन्दिर मे आकर शिवलिंग से—और आखिर माग-मागकर उसने भगवान् को इतना तग कर दिया कि भगवान् को उसे बेटा देना ही पड़ा।

सोचता हू, भगवान् पूरा बनिया है। मा ने भगवान् से भी एक सौदा कर लिया था—तू मुझे एक बेटा दे दे मैं उसे तेरे इसी मन्दिर म चढा जाऊगी तेरी सेवा म अर्पित कर जाऊगी

अजीब सौदा है—मा न भगवान् पर भी एहसान कर दिया दख तरी सेवा क लिए मैं क्या दे रही हू। लाग मुट्ठी भर मक्की का आटा दत हैं या गुड चावल और नारियल चढा देते हैं या ज्यादा से ज्यादा किसी चबूतरे और बावली पर सगमरमर मढ जात है या कलश पर साने का पतरा पर मैंने जाता-जागता एक बच्चा तेरी मूर्ति के आगे रखा है और उधर मेरी मा ने मेरे बाप पर भी एहसान कर दिया—कितनी मुसीबत झेलनी पडी पर आखिर मैंने तेरे कुल का नाम रख लिया तेरा वश खत्म होन नही दिया, और चाह तरे इस बटे का तर खेतो म जाकर हल नही जोतना है, बुढापे म तेरी लाठी भी नही पकडनी है पर तू कभी कभी उसे आखो से देखकर कलेजा ठडा कर सकता है—दुनियादार बेटो को सिफ देखा जाता है पर साधु बेटे के ता दशन किए जात हैं।

मा अक्सर यहा दशन करने आती है बाप सिफ सक्रा ति वाले दिन या किसी पव पर। शायद इसलिए कि बहुत मुसीबतें मा ने झेली थी और उसी का महत्त्व जानने क लिए उसे एक प्रत्यक्ष सबूत की जरूरत पडती है और मैं बास बरसा का प्रत्यक्ष सबूत हू।

मुझे याद नही—चालीसा नहाने के बाद जब मेरी मा मुझे एक गरुए कपडे म लपटकर इस मन्दिर म दशन आई थी तो शिवमूर्ति के ठडे परा पर पडा मैं राया था या नही। (सुना है मा न अपनी मानता क मुताबिक मुझे पदा हान ही गेरुए कपडे म लपेट दिया था।)

मन्दिर के मुख्य सत किरपासागर जा त मेरे माथे का मूर्ति क परा म छुआकर मुझे फिर मा का झोला म डाल दिया था—"यह बालक

आज से शिव का पुत्र है, पार्वती इसकी मा, और तू इसकी धाय। एक वरस के लिए तुझे दूध पिलाने की सेवा सौंपते हैं। इसकी पहली वर्ष-गाठ पर यह बालक हमें लौटा देना।"

सो एक वरस के लिए मैं उधार सौंपा गया था। पता नही, इस एक वरस मे मैंने मा को मा कहकर पुकारा था या नही, शायद नही—क्योंकि मेरे होंठ इस शब्द से परिचित नही लगते।

अनुमान लगाता हू कि अपनी पहली वर्षगाठ को जब गेरुआ चोले मे घुटनो-घुटनो चलते, मैंने मन्दिर की मूर्ति के पैरो मे पड़े हुए फूलो के पास पहुचकर, किसी फूल को उठाकर खाने के लिए मुह मे डाला होगा, और मेरे गले ने फूल के स्वाद को कबूल न किया होगा—तो मै जरूर रोया होऊँगा। (मन्दिर का बूढा सेवादार साईं भगतराम बताता है कि फूलो की पत्तिया मेरे तालू से चिपक गई थी, और मेरा सास रुक गया था। उसने मेरे मुह मे उगली डालकर वे पत्तिया निकाली थी, और फिर मुझे वहलाने के लिए महत जी ने खुद एक कटोरी मे दूध और वताशा डालकर मुझे मूर्ति का प्रसाद चखाया था।)

शायद कुछ दिन टुकुर-टुकुर सबके मुह की तरफ देखा होगा—साईं भगतराम के मुह की तरफ, गोविन्द साधु के मुंह की तरफ, महत किरपासागर के मुह की तरफ, शिव की मूर्ति के मुह की तरफ, पार्वती की मूर्ति के मुह की तरफ और मन्दिर में आकर माथा टेकने वाले भक्तो के मुह की तरफ—कुछ याद नही। ये सारे मुह चिरकाल से परिचित लगते है।

मन्दिर मे एक गुफा है। कहते है, यह गुफा यहा कागडा घाटी मे से निकलकर कैलास पर्वत पर पहुचती है। पर अब कोई इस गुफा मे से गुजरा नही। जाने वाले जब जाते थे, इस वात को सदिया गुजर गई है। यह गुफा कई सौ मील लम्बी है, यह सिर्फ एक कथा है। कथा का इधर का सिरा सामने दिखता है—गुफा का मुह। उधर का सिरा

कोई नही जानता। पता है—मैं भी नही जान सकूगा, पर लगता है, जसे मैं इस सकडा मील लम्बी गुफा म कुछ मील रोज चलता हू। पहुचता कही नही सिफ चलता हू। अधेरा इसके गोल मुह पर भी पुता हुआ है—और दूर अदर भी।

मा शब्द को सिफ इस कहानी को चलाने के लिए बरत रहा हू वसे इस शब्द स मेरा कोई वास्ता नही। मदिर मे बहुत सी औरतें आती हैं वह भी आती है। मन से उसको वह औरत ही कह सकता हू मा नहीं। यह शब्द एक मजाक लगता है—मेरे साथ तो लगता ही है उसके साथ भी। बिल्कुल उसी तरह जसे बेचारी पावती के साथ।

कई बार रात के अधेरे म मैं अपनी कोठरी स निकलकर मदिर क उस हिस्से मे चला जाता हू, जहा शिव और पावती की आदमकद मूर्तिया है। वह दोना मुझे बडे स्थिर और आराधना म लीन एक बूढे किसान और एक अधेड औरत की तरह खडे लगत है—भगवान म एक बटे की मुराद मागत हुए। बिल्कुल उसी तरह जिस तरह मेरी मा और मेरा बाप किसी दिन इसी तरह एसे ही खड होकर भगवान स प्राथना करते रहे होंगे।

मैं दोना मूर्तियों के सामने खडा हो जाता हू जसे हस रहा होता हू—तुम्ह एक बेटे की बहत कामना है? अच्छा, मैं अपने आप का दान देता हू

मूर्तिया दो भिखारियो की तरह लगती हैं और अपना आप—भिक्षा की वस्तु।

नही मैं भिक्षा की वस्तु भी नही, सिफ भिक्षा का एक पात्र हू। वस्तु म एक रग, एक स्वाद, एक महक शामिल होती है। और सबसे ज्यादा एक सन्तुष्टि शामिल होती है मुझम वह कुछ भी नहा। मैं सिफ

एक पात्र हू—वस्तु को ढोने वाला। वस्तु एक तसल्ली है—जो मा नाम की एक औरत को मिली है, और बाप नाम के एक मर्द को मिली है, या शिव-पार्वती को मिली है, जिनकी मूर्तियो वाले इस मन्दिर की शोभा बढ गई है—कि इस मन्दिर से बेटो की मुराद मिलती है।

मेरा ख्याल है—महत किरपासागर जी सचमुच दूरन्देश है। उन्होने मेरे जन्म के समय ही मेरे मन की उस अवस्था का अनुमान लगा लिया था, जो कुछ सोच और समझ आने पर मेरे अन्दर पैदा हो जानी थी। इसलिए उन्होने एक सक्रान्ति वाले दिन मेरा नाम रखा था—किरपापात्र।

किरपापात्र या भिक्षापात्र एक ही बात है। एक तरह से हम सब भिक्षा पर ही पलते है—सिर्फ मै नही, साई भगतराम भी, गोविन्द साधु भी। महत किरपासागर भी। हाथ फैलाकर कोई भी किसी से कुछ नही मागता, सब पैरो के जोर से मागते है—कभी अपने पैरो के जोर से, और कभी उनसे बहुत तगडे शिव-पार्वती के पैरो के जोर से—भक्तजन जो कुछ देते है, शिव-पार्वती के पैरो पर रख देते है, कई महत जी के पैरो पर भी रख देते है, कोई गोविन्द साधु के पैरो पर भी रख देता है, और कोई-कोई साई भगतराम के पैरो पर भी—मेरे पैर भी पैरो मे शामिल हो रहे है—हम सब जैसे हाथो का काम पैरो से ले है…

पर भिक्षापात्र होने का ख्याल सिर्फ मुझे आता है। पता नही ो। शिव-पार्वती तो खैर बोल नही सकते, महंत जी के मुह से भी ऐसी त मैने कभी नही सुनी। गोविन्द साधु गूगा है, उसके कुछ बोलने का ाल ही नही उठता, पर उसके मुह से भी नही लगता कि वह किसी ज को भीख समझता हो—बल्कि बादामो की ठडाई अगर कभी उसके स्से नही आती तो वह घूरकर सबकी तरफ देखता है। साई भगत-

राम तो बिल्कुल अलबेला है, वह बाजरे की सूखी रोटी भी उसी स्वाद से चबा जाता है, जिस तरह गिरी की पंजीरी। सिर्फ मेरे गले में कुछ अटका हुआ है—और हर ग्रास के साथ चुभ सा जाता है।

डेरे के नाम पर सिर्फ चार कोठरियां हैं—एक महंत जी की, एक मेरी, एक गोविन्द साधु और साईं भगतराम की और एक आने जाने वाले साधुओं के लिए। इन कोठरियों की झाड़ बुहार साईं भगतराम के जिम्मे है। मन्दिर इन कोठरियों से बिल्कुल अलग है—एक पथरीली पगडंडी को लांघकर पहाड़ के एक वक्ष में बना हुआ। एक छोटी सी पानी की नहर मन्दिर के पैरों में बहती है। इस नहर के साथ चौतरे की और पथरीली पगडंडी की सफाई भी अक्सर साईं भगतराम ही करता है। (वैसे यह गोविन्द साधु के जिम्मे है) मन्दिर के फर्श को धोना और पोछना मेरे जिम्मे है—मुझसे पहले शायद महंत जी के अपने जिम्मे था—और लगता है इस काम से हम सब भिक्षा के शब्द को अपने से झाड़ देते हैं। सबसे मेरा मतलब है—सारे, सिवा मेरे।

मन्दिर पत्थरों या ईंटों से बनाया हुआ नहीं एक बहुत बड़ी चट्टान को बीच में से खोदकर बनाया हुआ है। चट्टान का ऊपर का हिस्सा छत की तरह है, नीचे का हिस्सा फर्श की तरह। इसके अन्दर की मूर्तियां भी कहीं बाहर से लाकर रखी हुई नहीं, बीच के पथरीले हिस्से को ही तराशकर बनाई हुई हैं। और बाहर से जो नदी गुज़रती है वह पहाड़ के पिछले हिस्से में से ऐसे आती है कि उसका कुछ पानी चट्टान के ऊपर के हिस्से से टपककर बूंद बूंदकर मूर्तियों के शरीर पर गिरता रहता है। मूर्तियां रोज़ धुली हुई होती हैं—लगातार पड़ते पानी से सीलन की एक पतली सी परत उनपर जम जाती है जिसे रोज़ एक मोटे कपड़े से मलकर उतारना होता है। और लगता है—भिक्षा का शब्द भी बूंद-बूंद गिरते पानी की तरह दिन रात मेरे जिस्म पर पड़ता रहता है। मैं

किसी भी ख्याल के मोटे कपडे से मलकर उसे उतारू, वह तब भी एक सीलन की पतली परत की तरह मेरे ऊपर जमा रहता है। रोज जम जाता है।

महत किरपासागर जी से निजी तौर पर मुझे कोई शिकवा नही—उन्होने अपने लिए आए चढावे में से हिस्सा निकालकर मुझे पाला है, पढाया है—सिर्फ शिकवा है तो उनके सागर होने से, और अपने पात्र होने से।

शिकवा भी नही, नफरत है।

और यही नफरत उस मा नाम की औरत से है जिसने इस पात्र को अस्तित्व दिया है। यह नफरत इस हद तक है कि वह जब भी मन्दिर के दर्शन के लिए आती है, मैं किसी बहाने मन्दिर मे बाहर चला जाता हू। कभी वह मेरी कोठरी की दहलीज रोक ले, और अपने पल्लू मे बधी हुई अखरोट की गिरिया जबरन मेरे मुह मे डाल दे, तो उसकी पीठ मुडते ही मैं मुह में से वे गिरिया थूक देता हू।

बाप नाम के मर्द को जब देखता हू—वह अपने वश की रखवाली करता हुआ एक प्रेत-सा लगता है।

किरपासागर जी के गाल मुझे दो लाल पके हुए फोडो की तरह लगते है, जिनपर एकदम पुल्टिस बाधने का ख्याल आता है ··

मा—धीरे-धीरे चलती हुई जब एकदम सामने आ जाती है—वह मुझे पजो के बल चलती हुई बिल्कुल एक बिल्ली लगती है, जो अभी एक चूहे की गर्दन दबोच लेगी ···

बाप—दुबला-पतला-सा और सिर को कन्धो के ऊपर एक बोझ-सा डालकर चलता हुआ मुझे खेतो मे गाडे हुए 'डरने' की तरह लगता है ·· और मैं चिडियो-कौवो की तरह उससे डर जाता हू ··

एक साधारण आख से शायद यह सब कुछ नही दिख सकता, पर मुझे

पता है, मरा आखों मे नफरत की डोरिया पडी हुई हैं

गोबिन्द साधु जब बूटी रगडकर पीता है उसकी आखा म भी लाल डारिया पड जाती हैं और वह लाल डारियो वाला आखा स जब मुझे देखता है—मैं उस बीस बरस का एक जवान आदमी नही जवान औरत नजर आता हू

तीन चार साल हो गए, गोबि द साधु ने एक दिन अपनी तोरी जसी लटकती टागा पर बादाम रोगन की मालिश करते हुए जबरदस्ती मेरी बाह पकड ली थी और वह मेरी पीठ पर और टागा पर बादाम रोगन की मालिश करने लगा था। मुझे बिल्ली कुत्ता या कोई भी जानवर अच्छा नही लगता, उसके लम्बे लम्बे हाथ मुझे कुत्त के पौंचो की तरह लगे थ मैंने जब छूटने के लिए जोर लगाया था तो उसने अपनी पूरी ताकत से मुझे एक चौड पत्थर पर गिराकर । मैं बडे जार स चिल्लाया था— इतने जार से—कि अ त म किरपासागर जी यह आवाज सुनकर वहा पहुच गए थे। उन्होने पास ही पड हुए बूटी रगडने वाले डडे स गोवि द साधु को ऐसे पीट डाला था ~ जस वह गोविन्द साधु को भी बूटी की तरह ही रगड देंगे। उस दिन क बाद गोविन्द साधु न मुझस कुछ नहा कहा, बल्कि मैं दोपहर क समय जिस पड के नीचे बठकर पढता हू, वह वहा स घूमकर दूर जा बठता है। पर यह मैं अब भी देख पाता हू—वह जिस दिन बूटी रगडकर पी ले, और उसकी आखो म लाल डोरिया पड जाए वह उनकी कोरा म स मुझ आत-जाते ऐसे दखता है—जस मैं उसको बीस बरस की एक जवान औरत दिखता होऊ

पर उसस मुझे नफरत नहा। वह खुजली क मारे हुए कुत्ते की तरह लगता है। कुत्त स कोई रास्ता काटकर निकल सकता है तो उस एक ग्लानि भी हो सकती है पर उसक खून म नफरत नहीं खौलती।

इस तरह साइ भगतराम एक खस्सी (बधिया) जसा लगता है, जिसस

किसी गाय को कोई खतरा नही। इसलिए उससे भी कोई नफरत नहीं होती।

नफरत के पात्र सिर्फ वे है जिन्होने अपनी झोलियो मे दान-पुण्य भरा हुआ है—और या भिक्षापात्र—मैं स्वय।

दो

नफरत……नफरत … नफरत……चिडियो का एक झुण्ड अभी चहकता गुजरा है। शायद उधर की दीवार के पास साई भगतराम ने दाल-चावल सूखने के लिए डाल रखे थे, चिडियो ने उसे चुग्गा समझ लिया था, और साई ने या गोविन्द साधु ने अपना घुघरू वाला डडा खडका दिया था कुछ आवाज़-सी आई थी, और फिर चिडियो का झुण्ड मेरे ऊपर से चहकता हुआ गुजर गया। सब चिडिया जैसे चहक रही थी—नफरत… नफरत…नफरत· ·

यह शब्द शायद बहुत बडा है—चिडियो की चोच मे पूरा नही आ रहा था, पर वे इसी शब्द को बार-बार दुहरा रही थी—जितना भी उनकी चोच मे पकडा जा रहा था…

डेरे में परसो से मूसलनाथ का डडा फिर खडक रहा है। वह बरस में एक-आध फेरा जरूर लगाता है। फिर उन दिनो मे रोज़ भाग का दौर चलता है। बहुत छोटा था, जब वह मुझे झोली मे बिठाकर—नही, बिठाकर नही, झोली मे दबोचकर कहता था, "तुझे नाथ जोगियो के नाम आते है? जो तू बिना भूले सारे नाम सुना दे तो मैं तुझे इलायची और मिश्री दूगा…" इलायची और मिश्री के लिए नही, पर उसकी झोली मे से छूटने के लिए मैं जल्दी से जोगियो के नाम दुहरा देता था—आदिनाथ,

महेन्द्रनाथ, उदयनाथ, सन्तोषनाथ, कथडनाथ सत्यनाथ अचम्भनाथ चौरंगीनाथ और गोरखनाथ। वह झोले म से इलायची मिश्री निकालने लगता तो मैं उसकी बाहों से छिटककर परे जा खड़ा हो जाता था और जोर से कहता था—और तेरा नाम मूसलनाथ। मुझे पता था उसका नाम नील बाबा है पर उसके हर समय डंडा पकड़े रहने के कारण मैंने उसका नाम रख दिया था—मूसलनाथ। "धत् तेरे की" कहता हुआ वह इलायची और मिश्री को फिर मुट्ठी म भींच लेता था और मुझे अपनी बाहों म दबाने के लिए आगे बढ़ता था। इतने म मैं दौड़ जाता था।

आज पता नहीं क्यों, ऐसा लग रहा है कि अगर वह आज एक बार मुझे फिर झोली म दबाकर जोगियों के नाम पूछे तो सारे नाम बताने के बाद मैं सिर्फ यही कहूंगा—तेरा नाम मुझे मालूम नहीं पर मेरा नाम है—भिक्षानाथ। अपने आपसे इससे बड़ा मजाक मैं और क्या कर सकता हूं

सिद्ध मकरध्वज बनाने का नुस्खा सिर्फ नील बाबा को आता है, पिछले बरस उसने महंत जी को बनाकर दिया था, सारा साल उन्हें जाड़े का दर्द नहीं हुआ था। इस बरस वह फिर बना रहा है और इस बरस उसने महंत जी के कहने पर मुझे उसका नुस्खा लिखा दिया है—सोना आठ तोले, पारा एक सेर, आँवलासार गंधक दो सेर। इन तीनों चीजों को पहले लाल कपास के फूलों के रस में फिर घीकुमार के रस में घोटकर आतशी शीशी म डालकर मुंह पर खड़िया मिट्टी लगाकर, और मुल्तानी मिट्टी के पांच कपड़े की सात तहें बोतल पर लपेटकर सुखा लेना। इस शीशी को एक हांडी में सीधा रखना, और उसके चारों तरफ बालू रेत भर देना। बत्तीस पहर आग की एकसार आंच देना। फिर बोतल के मुंह पर उड़कर जो लाल पदार्थ जम जाएगा—वही मकरध्वज होगा

और नील बाबा ने यह नुस्खा सिखाते हुए मेरे कान को मरोड़कर

हा था—अनाडी हकीम की तरह कुछ कच्चा-पक्का किसी को न खिला ना। पारा कच्चा रह गया, तो खाने वाले की हड्डिया गल जाएगी…

ज़बान रोक ली थी, नही तो जबान से निकलने लगा था—मूसल वावा ! भक्षा भी कच्चे पारे की तरह होती है, खाने वालो की हड्डिया गल जाती ; ।

पारे को शिव-धातु कहते है, भिक्षा को पता नही क्या कहते है… मेक्षा को मा-धातु कहना चाहता हू ।

वह मेरी मा आज भी आई थी। दवे पाव चलती हुई वह मेरी कोठरी क आ गई थी । वह जव दुवककर आती है, मुझे हमेशा एक विल्ली का ख्याल आता है। कल सारा दिन यही ख्याल आता रहा था—सारा दिन हमारे डेरे मे एक विल्ली को पकडने की भाग-दौड होती रही थी । एक कोठरी में दूध की कटोरी ऐसे दहलीज के पास रख दी गई थी, कि विल्ली ने जव कटोरी को मुह मारा था, वाहर ताक के पीछे खड़े साईं भगतराम ने तुरन्त दरवाजा भिडका दिया था। विल्ली कोठरी में वन्द हो गई थी। पर जव दूसरी कोठरी मे से वीच के दरवाजे को खोलकर, विल्ली को पकड़ने का यत्न किया गया तो वह उछलकर खिडकी के ताक से ऐसे जा लगी कि खिड़की की पतली-सी कुडी टूट गई, और विल्ली उस खिड़की में से वाहर कूद गई। लेकिन आखिर डेरे के तीन साधु उसके पीछे पडे हुए थे, शाम तक उन्होने विल्ली को पकड़ ही लिया—और आज उस विल्ली को मारकर उसकी एक हड्डी को त्रिफले के पानी मे पीसा जा रहा है। गोविन्द साधु को पिछले दिनों से एक फोडा हो गया है । शील वावा कहते हैं कि यह भगंदर है, और उसके ऊपर लगाने के लिए विल्ली की हड्डी का लेप तैयार करना है।

कल सारी रात मैं सपने में एक विल्ली पकडता रहा था—हालाकि दिन में विल्ली पकड़ने के लिए मैंने किसी का साथ नही दिया था—पर

सपने मे मैं ऊचे नीचे पत्थरा पर मे गुजरता एक बिल्ली के पीछे-पीछे दौडता रहा—और अजीब बात थी कि मेरे आगे आगे दौडने वाला चीज कभा एकदम बिल्ली बन जाती थी कभी मेरी मा

मुझे पता नही भगदर फोडा क्या होता है, उससे क्स पीप बहता है, और उसमे क्से टीसें उठती हैं—पर मेरी हड्डियों म एक दर्द है एक एक हड्डी म एक एक जाड म, एक एक स्याल म

और बडा ही भयानक स्याल आया है—मन के इस फोडे पर लेप करन क लिए अगर मा की पसली को पीसकर

मनु ने इक्कीस नरक माने हैं, ब्रह्मवैवन म छियासी नरक कुण्ड लिखे हुए है—और मरा यकीन है उनम स एक नरक कुण्ड जरूर मेरे मन की हालत जसा होता होगा।

तीन

गोविन्द साधु को शील बाबा की दवा से शायद सचमुच आराम हो गया है—आज उसका घुघरू वाला डडा फिर उसकी पत्थर की कूडी मे छनक रहा है। वह भाग घोट रहा है और उसका गूगापन भी घुघरू वाले डडे की तरह छनक रहा है। 'दे रगडा मस्त कलदर दे रगडा ' यह बोल उसे साई भगतराम ने सिखाए थे—जो उसके गल म स छनकर बन जाते है— गे ग' ग

पता नही मह घुटती हुई भाग की ठडी-सी गध है या कुछ और—अचानक मुझे ठड सी लगने लगी है। पर ऐसा कई बार लगता है, बठे-बठे लगन लगता है—कई बार धूप म बठे हुए भी और कई बार रजाई मे सोते हुए भी

बहुत छोटा था, स्कूल पढने के लिए जाता था, तो एक दिन मेरा सहपाठी रुलिया स्कूल से लौटते वक्त मुझे अपने घर ले गया—आदर की चीज़ था, इसलिए रुलिये की मा ने मेरे बैठने के लिए मूढा डालकर, मूढे पर खेस बिछा दी थी। और मैं सारे घर मे एक अलग-सी चीज़ की तरह उस मूढे पर बैठ गया था।

रुलिया के लिए उसने मूढा नही बिछाया था। बल्कि उसने उसे झिडककर उसकी बाह अपनी तरफ खीची थी—"यह मुह पर तूने स्याही कहा से लगा ली?" और अपने दुपट्टे के पल्लू से उसने रुलिये का मुह रगडकर पोछा था। सूखे पल्लू से स्याही नही छूटी थी, इसलिए उसने कन्नी को थोडा-सा थूक लगाकर, उस कन्नी को रुलिये के मुह पर रगडा था।

रुलिया उससे बाह छुडाकर और हाथ मे पकडे हुए बस्ते को जल्दी से कही रखकर, मेरे साथ जाने के लिए आतुर था, पर उसकी मा ने फिर डाट दिया, "जाता कहा है भूखा पेट लेकर, बैठ जा सीधा होकर, निकम्मी औलाद!" और फिर उसी पल बडे दुलार के कहने लगी—"किसी को घर लाकर कोई भूखा थोड़े ही भेजा जाता है? बेअकल, अभी मैं गर्म-गर्म रोटी पका देती हू, तू भी खा और अपने दोस्त को भी खिला···" और उसने रुलिये को समझाते हुए उसका माथा चूम लिया था।

एक औरत नही, जैसे एक फिरकी माथा चूम रही थी।

चूल्हे में अधजली लकड़ियो का धुआ सारे घर मे घूम रहा था। रुलिया ने जब अपना बस्ता फेका था तो उससे एक किताब उधर गिर गई थी। रुलिया का छोटा भाई खटोले पर सोता हुआ अचानक रोने लगा था, उसके मुह पर बैठी मक्खियो ने शायद बहुत जोर से भिन-भिन की थी। रुलिये की मा ने जैसे एक हाथ से चूल्हे को हवा की और

दूसरे हाथ से रलिया की बस्ते से गिरी किताब को उठाकर पहले माथे से लगाया और फिर बस्ते मे रखा, और एक हाथ से खटाल पर री रहे बच्चे के मुह पर से मक्खियो को उड़ाया लग रहा था कि शिव के तीन नेत्रो की तरह रलिया की मा के तीन हाथ थे

बडा भला घसमला सा घर था—पर लकडियो की तिड तिड म से, मक्खियो की भिन भिन मे से रलिया की पडती झिड़कियो म से, और रलिया के मुह को चूमती उसकी मा के थूक म घुल मिलकर एक सेंक-सा उठकर मेरी तरफ आने लगा था—एक गर्माई सा

मैं फिर कभी रलिया के घर नही गया पर कभी कभी अचानक बैठे बठे या सोते हुए मुझे ठड सी लगती है, और पता नहीं क्यो मुझे बचपन की वह बात याद आ जाती है

चार

कल शिवरात्रि का मा ने व्रत रखा था पूजा के लिए महत विरपा-सागर जी को बुलाया था। सुना है कि उनको यह ताकीद भी थी कि पूजा के समय मैं भी जरूर उनके साथ आऊ।

मुहूर्त टालने के लिए मैं मन्दिर के पिछवाड़े जगल म इस तरह छुप गया था कि अगर वे मुझे ढूढते तो पूजा का मुहूर्त गुजर जाता।

पता लगा कि वह पूजा के वक्त रोए जा रही थी

आज साइ भगतराम ने उसके बह रम्ना म एक बात बताई—"इस सडक को रगो मे रक्त की जगह पानी भरा हुआ है।"

सुनकर हसी-सी आ गई है। मेरा ख्याल है, उसने ठीक कहा है। पद्मपुराण मे एक कथा आती है कि मार्कण्डेय ऋषि जब तप कर रहा था,

तो आसपास खाने के लिए पत्तो के सिवा कुछ न था। सो वह बर
तक पत्ते खाता रहा, और उसके शरीर में खून की जगह हरे पत्तो
रस भर गया। ऋषि ने जब अहकार से भरकर यह बात महा
को बताई तो महादेव ने उसका अहंकार तोड़ने के लिए दिखाया
उनके शरीर मे खून की जगह भस्म भरी हुई है। भला अगर
ऋषि की नाडियो में खून की जगह पत्तो का हरा रस हो सकता है, अ
महादेव की नाडियो मे भस्म, तो मेरी नसो मे ठडा पानी क्यो नही
सकता ? आखिर मैंने अपने जन्म से लेकर अब तक मन्दिर वाली न
का पानी पिया है···

पां

आज फिर मुझे हसी-सी आ रही है। हसी पता नही क्या होती
पर जो कुछ आई थी शायद हसी ही थी।

मैं शिव जी की मूर्ति के पास खडा था। यह प्रार्थना का समय थ
मन्दिर की दहलीजो मे से गुजरते हर किसी का हाथ लोहे के घण्टे
एक बार जरूर छू लेता था, और घण्टे की आवाज़ प्रार्थना के बो
से टकरा रही थी—आवाज बहुत भारी थी, इसलिए वह साबुत
सिर्फ बोल टूट रहे थे ·

जै जै जै जै जै त्रिपुरारो
कर त्रिशूल सोहत छवि भारी
शारद नारद शीश नवाय
नमो नमो जै नमोशिवाय···

और मैंने देखा—सामने मेरी मां मूतिया के आगे दोनों हाथ जोड़े खड़ी थी। पत्थर की छत से छनकर बूंद-बूंद पानी मूतिया पर आ गिरता रहता है और उनकों पर भी। उसके सिर के पल्ले पर भी पड़ रहा था—और वह बिल्कुल भीगी हुई बिल्ली की तरह लग रही थी—पर हंसी इस बात पर नहीं आई थी—इस बात पर आई थी कि आज उसने अपने बालों का मेहन्दी से रंगा था। मेहन्दी का ख्याल मुझे बड़ी देर बाद आया यह याद करके कि कुछ दिन हुए उसने मेरे सामने माथे की बन पटिया को दबाते हुए साइं भगतराम से सिरदर्द का इलाज पूछा था और साइं ने उसे मेहन्दी पीसकर सिर पर लगाने के लिए कहा था। पर अचानक जब उसके बाल लाल से देखे—तो मुझे लगा वह आज काली और सफेद बिल्ली की जगह अचानक भूरी बिल्ली बन गई था और वह बिल्ली की तरह म्याऊं म्याऊं करती लग रही था—

कीन्हो दया तहाँ करो सहाई
नीलकंठ तब नाम कहाई
प्रगटे उदधि मथन म ज्वाला
जरे सुरासुर भये बेहाला

जिस्म म एक कपकपी सी आ गई—याद आया बहुत छोटा था अभी अलग कोठरी म सोने लायक नहीं था। चार बरस का होऊंगा महंत किरपासागर जी की कोठरी म बिछे उनके आसन के पास ही एक चटाई पर सोता था, और अचानक एक रात आंख खुल गई थी—सामने जो कुछ दिखा था उसे देखकर घिघियाकर रो पड़ा था। वह तो आदमकद कोई चीज थी पर उस वक्त वह सारी कोठरी मे फैली हुई लगती थी—एक बहुत बड़ा और स्याह काला मुंह था जिसपर दोनों आंख सफेद और

लाल रग मे जलती दिख रही थी। सिर पर कुछ हरे-हरे पख झूल रहे थे।

महत किरपासागर जी ने मुझे उठाकर अपनी गोद मे ले लिया था, पर मै रोए जा रहा था, और कापे जा रहा था।

"तू उसे हाथ लगाकर देख, यह तुझे कुछ नही कहेगा" महत जी ने एक वार मुझे अपनी गोद से हटाकर उसकी तरफ करना चाहा था, मेरा डर उतारना चाहा था, पर उसकी तरफ देखते ही मेरी फिर चीख निकल पडी थी।

सवेरे दिन के उजाले में, वाहर पेडो की खुली जगह पर, महत जी ने मुझे विठाकर, और उसे भी सामने विठाकर मुझे समझाया था—"यह वडा अच्छा आदमी है, दीवाना साधु, हरिया वावा।"

वहुत देर वाद मुझे समझ आई कि साधुओ का एक समुदाय दीवाने साधु कहलाता है, और इस समुदाय के सारे साधु मुह पर काला रग मल कर, सिर पर मोर के पख टूग लेते है।

पर उस रात की भयानकता वडी देर तक मेरी याद में अटकी रही थी—एक कुछ वहुत काला-सा, मेरी आखो के आगे फैला हुआ, और उसमे मोर का एक रग-विरगा पख हिलता हुआ ··

आज की इस घटना से पता नही उसका क्या सम्वन्ध था—मा के मेहदी रगे वालो को देखकर मुझे मोर का पख याद आ गया। लगा मेरे सामने एक वहुत वडा खालीपन है—और उसी काले खालीपन मे मेहदी रग का एक गुच्छा लटक रहा है—मोर के पख की तरह।

उसके होठ वरावर फडक रहे थे—

स्वामी एक है आस तुम्हारा
आय हरो मम सकट भारा

शकर ही सकट के नाशन
सकट नाशन विघ्न विनाशन

मा की आखो के आगे पतली पतली झुरियो का एक जाल-सा फैला हुआ है। आखें उस जाल म फसी हुई लग रही हैं नहीं तो कई बार ऐसे लगता है अगर वे जाल म फसी हुई न हो तो उसके मुह से उडकर सीधा मेरे मुह पर आकर बठ जाए

पर काले और फले हुए खालीपन म ये आखें मुझे कभी-कभी ही दिखती हैं नहीं तो काला और फला हुआ यह खालीपन बडा अडोल होता है। सिफ आज यह लग रहा है कि उस खालीपन म महदी रगे बालो का गुच्छा लटक रहा है—मोर के पख की तरह।

छ

भुलावा एक बार हो सकता है, दो बार हो सकता है, पर यह जो रोज—आए दिन—लगता है—यह शायद भुलावा नही होगा

प्रभात का समय था। पूजा के समय मदिर मे खडा था, मूर्तियो के बिल्कुल पास था इसलिए मूर्तियो के चरणो म चढाए हुए फूल मेरे परो तक भी पहुचे हुए थे और फिर सुन्दरा ने फूलो की एक माली इस तरह पलटी कि मेरे परो उनके नीचे ढक से गए। और फिर जब सुदरा ने जमीन तक माथा झुकाकर मूर्तियो को प्रणाम किया तो लगा कि उसका एक हाथ मेरे पर को छू रहा था।

जरा-सा चौंककर मैंने आखें नीची कर ली—अपने परो की तरफ—

पर पैरो के ऊपर, और पैरो के गिर्द, फूलो का इतना ढेर था कि न अपना पैर दिखता था न उसका हाथ।

यह भुलावा भी हो सकता था, इसलिए इस बात की तरफ फिर कभी ध्यान नही दिया। पर यह जिस दिन की बात है, उसके तीन-चार दिन बाद सक्रान्ति थी। रोज़ मन्दिर मे न इतने भक्त आते है, न इतने फूल चढते है, पर सक्रान्ति वाले दिन, पूर्णिमा वाले दिन, अमावस वाले दिन, या और किसी ऐसे दिन, छोटे-से मदिर का सारा चबूतरा फूलो से भर जाता है। उस दिन, सक्रान्ति वाले दिन फिर ऐसा लगा था—सुन्दरा ने फूलो की एक झोली मूर्तियो के चरणो मे पलटी थी, और फिर मूर्तियो के चरणो मे सिर झुकाती हुई, फूलो के ढेर में से बाह गुजारकर, लगा, मेरे एक पैर पर अपने हाथ की हथेली रख दी हो।

मन का जोर-सा लगाकर, दूसरी बार की घटना को भी एक भुलावा कह लिया था। पर पूर्णिमा वाले दिन फिर ऐसे ही हुआ था, अमावस वाले दिन फिर इसी तरह, और इससे अगली सक्रान्ति वाले दिन··· कल फिर ·

उसने और कभी कुछ नही कहा। पर बहुत दिनो की एक बात है—तब मैंने इस बात को भी एक सयोग ही समझा था—पर यह शायद सयोग नही था ··

वह अपने खेतो की मेड पर चलती गाव की तरफ लौट रही थी। शाम का अधेरा इतना गहन हो गया था कि एक बार देखकर भी जो कोई अपने ध्यान मे हो जाए, तो यह नही पता लगता था कि किसी ने देखा या पहचाना था या नही। मैं अपने ध्यान मे नदी की तरफ जा रहा था। नदी बिल्कुल उसके खेतो के सामने पडती है—और फिर लगा वह भी नदी की तरफ लौट पडी थी।

कुछ आगे जाकर मैंने पीछे एक बार देखा था—वहा तक, जहां तक

लगा कि वह नदी के किनारे जाकर खड़ी हो गई। एक आवाज-सी सुनाई दी जैसे वह नदी की तरह एक लम्बी आवाज मे गा रही थी---

पीछे मुडकर जरूर देखा था पर इस तरह नही कि उसको यह दिख जाए कि मैं उसकी आवाज सुनकर खडा हो गया था। एक पेड़ के तने के पास होकर जरा थम सा गया था।

देख सकता था---वह गा रही थी पर बिल्कुल अपने ध्यान मे। नदी के किनारे पानी मे हाथ लटकाकर कुछ धो रही थी---शायद खेतो से जो साग सब्जी तोडकर लाई थी उसे धो रही थी। अधेरे मे बहुत कुछ नही दिख रहा था। पर यह दिख रहा था कि वह बडी बेखबर थी न उस तरफ देख रही थी जिस तरफ मैं गया था न किसी और तरफ। सिर्फ जो कुछ गा रही थी, वह बडा अजीब था। उसकी पक्तिया पूरन भक्त के किस्से मे से था, पर वे पक्तिया, जिनमे उसके नाम जैसा नाम आता है

> मैं भुल्ली हां, तुसी न हार कोई
> लाइयो जोगियाँ नाल प्रीत लोको[1]
> जगल गये न बौहुडे सुदरा नू
> जोगी नही जे किस दे मीत लोको[1]

पेड के तने के पास मैं कुछ देर खडा रहा था।

ये पक्तिया न जाने क्या ठडे पानी के छींटो की तरह लगा थी।

---

१ मुझसे भूल हुई तुम कोई यह भूल मत करना, तुम कोई जोगियो से प्रीत मत करना। मुझ सुन्दरा के पास वह फिर लौटकर न आया वह ऐसा जगलो मे चला गया कि फिर वहा खो गया। जोगी किसी के दोस्त नहीं होते।

मैंने अपने कधे पर रखी हुई खद्दर की गेरुई चादर जरा कसकर दोनो कधो पर लपेट ली थी···

पर देखा था, वह फिर बेध्यान नदी के किनारे से लौट पडो थी—सीधी गाव को जाती हुई पगडडी पर। और लगा था—उसकी आवाज सयोग से मेरे कानो मे पड़ गई थी, उसने जान-बूझकर मेरे कानो मे नही डाली थी।

वैसे एक बात उस दिन रह-रहकर मेरी याद में अडती रही थी—बहुत साल हुए, जब मैं छोटा था, गाव की औरते जब कन्या जिमाती थी, मुझे मन्दिर मे से जबरन पकड़कर ले जाती थी, 'यह हमारा वीर लगूरिया' कहती थी, और मुझे छोटी-छोटी लडकियो की पगत मे बिठा देती थी।

और एक बार की बात है—इसी सुन्दरा की मा ने कन्याए जिमाई थी। उस दिन सुन्दरा ने सिर पर गोटे वाली लाल चुनरी ओढ रखी थी। उसके हाथ भी लाल थे, वह हम सबको अपनी हथेलिया दिखा रही थी—"देखो बल्ला जी, मैंने मेहदी लगाई है!" और सुन्दरा की मौसी ने सब लडकियो के पैर धोकर उनको जब मौली बाधी, और एक पंगत में बिठाया, तो मुझे सुन्दरा के पास बिठाती हुई जोर से सुन्दरा की मा से कहने लगी, "ओ बहन! जरा एक बार इधर देख। ये दोनो जने सुन्दरा और पूरन की जोडी लगते है। यह छोटा-सा साधु सचमुच किसी राजा का बेटा लगता है···"

छोटी-छोटी थालियो मे पूरी, हलवा और छोले देती हुई सारी औरते हस पडी थी। उस वक्त मुझे बिल्कुल पता नही लगा था कि वे क्यो हसी थी। सुन्दरा को भी पता नही लगा था ··पर फिर जब मैंने कुछ बरसो बाद 'पूरन भक्त' का किस्सा पढ़ा···तो फिर एक बार दशहरे के मेले में जब सुन्दरा सुसराल से आई हुई थी, और अपनी मौसी

की बेटी को मला दिखाती, अचानक मेरे सामने आ गई थी तो हसकर उसने अपनी मौसी की बेटी को कहा था— ले देख ले—मेरा पूरन मेरा जोगी "

पर यह बहुत दिनों की बात थी। सिर्फ उस दिन रह रहकर मेरी यादों में उलझ रहा थी जिस दिन नदी के किनारे मैंने उस बेसवर गाते सुना था—नदी की तरह लम्बी आवाज में वह कह रही थी— मैं भूली हू तुममे से कोई और जोगिया से प्रीत न लगाना

लेकिन फिर इस बात का भी एक अजाब सा सयोग समझ लिया था।

पर यह जो रोज—आए दिन फूलो के ढेर में छुपा हाथ मेरे पैर को छू जाता है

पैर कुछदेर के लिए सुन सा हो गया लगता है। किसी कथा-कहानी मे जसे कोई राजकुमारी फूल तोडने जाती है फूलो की किसी डाली को हाथ लगाती है डाली से लिपटा हुआ साप उसकी उगली को डस जाता है और वह वही मूर्च्छित होकर फूलो की झाडी में गिर पडती है—मेरा पैर भी फूलो के ढेर मे मूर्च्छित-सा हो जाता है

उसकी बाह एक सापिन की तरह फूलो के ढेर में फुकारती सी लगती है।

सात

आजकल महत जी का दाया गाल सूजा हुआ है। उनकी दो दाढें दुखती हैं। पर पूजा के नियम में उन्होंने कोई फर्क नही आने दिया। सिर्फ इतना फर्क पडा है कि श्लोकों के सारे शब्द उनके मुह में दातो की तरह अटके लगते हैं—हिलते भी हैं पर बाहर नहीं निकलते।

साईं भगतराम आजकल दो वक्त उनके लिए लपसी बनाता है, सिर्फ पतली-पतली लपसी उनके अन्दर जा सकती है, और कुछ नही। पहले वे रोज सवेरे, रात की भीगी बादाम की गिरिया छीलकर और शहद मे डालकर खाते थे, पर अब गिरिया चबाई नही जा सकती, इसलिए कुछ गिरियो को पीसकर लपसी में मिला लिया जाता है। वे नियम से जिस वक्त लपसी पीते है, एक कटोरी लपसी मुझे भी जरूर पिलाते है, अपने पास बिठाकर। जैसे शहद और गिरिया पहले रोज़ अपने पास बिठाकर खिलाते थे। सिर्फ यह पता नही लगता कि इस सब कुछ को मै जिस एक शब्द 'उनकी किरपा' से जोडना चाहता हू, वह जुडता क्यो नहीं··

रात जब वे सोने लगते है, साई भगतराम नियम से उनके पाव दबाता है। मैंने कई बार चाहा कि साईं भगतराम का यह नियम, मैं अपना नियम बना लू, पर उन्होने हर बार अपने हाथ के इशारे से मुझे पैरो की तरफ से हटा दिया। पता नही, उन्हे मेरी सेवा क्यो स्वीकार नही? वैसे 'सेवा' शब्द को लोग जिन गहरे अर्थो मे लेते है, मैं इसे उस तरह कभी भी नही ले सका। यह सिर्फ एक नियम की तरह लेना चाहता था—सवेरे उठने के नियम की तरह, या कीकर की दातुन करने के नियम की तरह। पर मुझे इस नित्य-नियम मे डालना, लगता है उन्हें मजूर नही। या शायद उन्होने इसे इसके असली रूप मे देख लिया है—यानी 'सेवा' से बहुत छोटे रूप मे। और इस छोटे रूप में उन्हे यह मजूर नही हो सकता।

अब कोई तीन दिनो से साई भगतराम लपसी मे पोस्त के डोडे भी पीसकर डाल देता है, ताकि उन्हें जल्दी नीद आ जाए, और दाढो की पीड़ा से उन्हे कुछ देर के लिए चैन मिल जाए। इसलिए वे रात को जब बहुत जल्दी ऊघने लगते हैं, मैं साई भगतराम को उसकी 'सेवा' से उठाकर खुद उसकी जगह ले लेता हू। ऊघते हुए वे यह नही पहचान

सका कि उनके पाँव का दबाने हाथ मेरे हैं या साह भगतराम के।
पर हैरानी मुझे उनपर नहीं, अपने आपपर हो रही है—कि यह मेरा नियम तथा की इतनी सी लगन मे भी इतना दूर है कि उनके परों को दबाने के बाद मैं जितनी देर अपने हाथों को अच्छी तरह मल मलकर न धो लू सो नहीं सकता।

समझ नही सकता पर नफरत जसी कोई चीज है जो मेरे मुह म एक दाढ़ की तरह उगी हुई है।

लगता है—जो कुछ खाता हू इसी दाढ से चबाता हू। चाहे कई बार यह भी लगता है—कि इस दाढ म बड़ी पीड़ा हो रही है। यह मेरे मुह म हिल रही है पर निकलती नहीं।

और कभी यह सोचता हू कि कही किसी दिन कोई चिमटी सी मिल जाए तो उसके साथ खींचकर इस दाढ को हमेशा के लिए अपने मुह स निकाल दू।

पर फिर कुछ नही होता। पीड़ा भी नहीं होती। बल्कि फिर हर चीज को इस दाढ से चबाने म स्वाद आता है।

हर एक चीज को हर एक ख्याल को जसे आज सुबह जब महन्त किरपासागर जी पूजा के श्लोक पढ़ रहे थे, और श्लोकों के सारे शब्द उनके मुह मे दाढ़ों की तरह अटके हुए थे, तो अचानक मुझे जो ख्याल आया था वह यह था—कि जो ये मुह खोल दें, तो मैं हाथ मे एक चिमटा ले लू और श्लोकों के सारे शब्द खींचकर उनके मुह से बाहर निकाल दू

यह किसी के लिए भी एक भयानक ख्याल है। पर एक पुजारी के लिए चाहे उसकी उम्र बीस वरस क्यों न हो—अति भयानक है

पर मैं सारा दिन इस ख्याल का स्वाद लेता रहा हू—जसे यह एक गिरी का टुकडा था जो अपनी दाढ स चबाता रहा हू

पा→

गिरी में से एक सफेद दूध-सा घूंट रह-रहकर मेरे अन्दर उतरता रहा था…

आज मेरी दाढ़ मे बिल्कुल कोई पीड़ा नही हो रही।

आठ

हे ईश्वर !

ईश्वर पता नही क्या चीज़ है, यह शब्द एक आदत की तरह मुह से निकल गया है।

आदत की तरह नही, दुखी हुई सास की तरह।

शील बाबा ने एक दिन मकरध्वज का नुस्खा लिखवाते हुए कहा था—"अनाड़ी हकीम की तरह कुछ अधकचरा करके किसी को न खिला देना। पारा कच्चा रह गया तो खाने वाले की हड्डिया गल जाएंगी…" और आज मैंने कच्चा पारा खा लिया है।

रोज नफरत की एक गिरी-सी खाता था। आज कच्चा पारा खा लिया है।

शायद हर जिन्दगी एक मकरध्वज होती है। ईश्वर जब भी किसी इन्सान को पैदा करता है, जिन्दगी नाम की चीज़ मकरध्वज की तरह उसे खिला देता है। और इन्सान हंसता है, खेलता है, जवान होता है, और उसकी जवानी धरती पर ठुमक-ठुमककर चलती है…धमकते चलती है…

और लगता है—ईश्वर ने जब मुझे जन्म दिया था और जब ज़िन्दगी नाम की चीज़ उसने मुझे मकरध्वज की तरह खिलाई थी, उस दिन एक अनाडी हकीम की तरह मकरध्वज बनाते हुए उससे पारा कच्चा र

गया था

यह कच्चा पारा शायद मैंने आज नहीं खाया, अपने जन्म के समय ही खा लिया था सिर्फ आज उसके असर को देख रहा हूं—क्योंकि आज लग रहा है कि मेरी हड्डियां गलनी शुरू हो गई हैं

आज प्रात काल—सुबह की पहली किरण के साथ—महंत किरपा सागर जी को लगा कि उनकी उम्र के दिन पूरे हो गए हैं। उन्होंने साइं मगतराम के कंधे का सहारा लिया, चारपाई पर से उठे, और जैसे-तैसे मंदिर में पहुंच गए।

मुझे बुलाया। एक नारियल मेरी झोली में डाला। और फिर जरी की एक पगड़ी शिव पार्वती के चरणों से छुआकर मेरे सिर पर बांध दी। अपनी सारी पदवी मुझे सौंप दी।

फिर मेरे आगे—अपनी पदवी के परा के आगे—खुद भी सिर झुकाया, साइं मगतराम और गोविन्द साधु को भी सिर झुकाने के लिए कहा और फिर उसके बाद जो कोई भी माथा टेकने के लिए आया उसे भी।

'सोचा था बहुत बड़ा समागम करूंगा। पर अब वक्त नहीं उनकी सिर्फ एक छोटी सी यह हसरत आई थी, वैसे वे बड़े सुर्खरू लग रहे थे।

योग्यता नाम की कोई चीज न कभी मुझे अपने में लगी थी न उस वक्त लग रही थी। बल्कि अपना आप उस वक्त

याद आ रहा था कि मंगल नाम का एक साधु कुछ बरस हुए, इस डेरे में आकर रहा था। वह जहां भी बैठता था पास से गुजरते हर कीड़े को हाथ से मारता रहता था। दिन में न जाने कितने कीड़े मारता था। उसका कहना था—मैं इस तरह कीड़ों को इनकी जून से छुड़ा रहा हूं

उस वक्त जरी तिल्ले वाली पगड़ी सिर पर बांधकर—मुझे अपना

प बिल्कुल उस कीडे की तरह लग रहा था, जिसे उसकी जून से छुडाने लिए किसी मगल साधु की ज़रूरत थी।

पर कहा कुछ नही, कहने का कुछ हक भी नही था।

शाम तक महत किरपासागर जी को और भी यकीन हो गया कि नकी उम्र के दिन पूरे हो गए थे और वह शायद आखिरी दिन था। बको अपनी कोठरी से बाहर भेज दिया गया। आज उनकी हालत को ब़ते हुए मन्दिर मे आए कितने ही श्रद्धालु, मन्दिर मे वापस नहीं ए थे, उन्होने सबको वापस जाने का हुक्म दिया।

और फिर मुझे अकेले कोठरी में बुलाया। पैरो के पास ही मैं बैठ या। उन्होने पैरो के पास से उठाकर अपनी बाह के पास बिठाया। पनी आखो के सामने।

पिछले कई दिनो से मुंह की सूजन की वजह से उन्हे बोलने मे श्किल होती थी, पर उनके आधे-से उच्चारण को समझने की आदत ड गई थी। इसलिए उन्होने जो कुछ कहा, समझने में कठिनाई नही ई।

समझने के लिए तो शायद इतनी कठिनाई हुई है कि सारी उम्र ी कुछ समझ मे नही आएगा, पर सुनने मे मुश्किल नही हुई।

"सिर की पदवी, सिर का भार, जिस तरह उतारकर तुझे दिया ;, उसी तरह मन का एक भेद, मन का भार भी उतारकर तुझे ना है..."

सुबह जिस तरह तिल्ले की और जरी की पगड़ी सिर पर रख ली ी मैंने, और मुह से कुछ नही कहा था, उसी तरह जो कुछ उन्होने ताया, छाती पर रख लिया मैंने, और मुह से बिल्कुल कुछ नही कहा।

सिर्फ यह लगता है—सिर शायद साबुत रहेगा, पर छाती साबुत नही रहेगी।

"आज जो भी पदवी तुझे मिली है, यह तेरा हक था, यह सिर्फ तुझे मिल सकती थी

"जिस तरह जो कुछ भी किसी बाप के पास होता है, बेटे को मिल जाता है। अमीर बाप से अमीरी, फकीर बाप से फकीरी

"मुझे सब कुछ मिला, जबान नहीं मिली। इस जबान से तुझे बेटा नहीं कह सका इस वक्त सिर्फ भगवान् हाजिर है, और कोई नहीं और भगवान् की हाजिरी म मैं तुझे एक बार बेटा कहकर मेरा अपना बेटा "

य सारे शब्द ज्यो-ज्यो उनके मुह से निकलते गए—मैं अपनी छाती पर रखता गया। देखने का जानने का, और सोचने का वक्त नहीं था, सिर्फ इन्हें पकड-पकडकर छाती पर रखता गया।

'तेरी मा एक पुण्यात्मा है उसे कभी दोष नहीं देना भगवान् ने खुद उसे सपने मे दर्शन दिए इस सयोग का हुक्म दिया उसने सिर्फ हुक्म माना और मैंने सिर्फ एक बार उसे अगीकार किया फिर कभी नजर भरकर उसकी तरफ नहीं देखा उसकी साध पूरी हो गई उसके मन म सिर्फ एक बेटे की साध थी तेरी मेरा भी जन्म-जन्म की तृष्णा मिट गई तेरा जन्म एक पुण्यात्मा का जन्म "

कोठरी का दरवाजा खडका। दूर दूर के मन्दिरो व साधुओ तक महत जी की बीमारी की खबर कई दिनो से पहुची हुई थी, पर आज सुबह मन्दिर के वारिस की नियुक्ति की बात भी शायद पहुच गई थी, और उन्होंने अन्त नजदीक जानकर आज जल्दी से उनकी खबर लेनी चाही थी। उन आए हुओ को कोठरी मे बठाकर, मैं कोठरी से बाहर आ गया।

रात सोने से पहले कितनी देर तक मैं आसपास की पहाडी पग-

डडियो पर घूमता हू। आज भी वही पगडडियां है, पैरों की जानी-पहचानी हुई, पर पैरो को कई बार पत्थरो की ठोकर लगी है।

पैर कापते जा रहे हैं—टांगो के बीच की हड्डिया जैसे गलकर खोखली हुई जा रही है···कोई कच्चा पारा खा ले तो शायद ऐसे ही होता होगा···

नौ

अगर जन्म बदलना एक चोला बदलना है, तो मैं रोज़ दो चोले बदलता हू।

चार पहर एक चोला पहनता हूं—डेरे के स्वामी होने का। और चार पहर दूसरा चोला, एक बड़े बदशकल कीडे का।

'कीडा' शब्द जितना हीन है, 'स्वामी' शब्द उतना ही महान्। यह मेरे अस्तित्व के दो सिरे है।

हीनता और महानता।

जब सोता हू—देखता हू कि एक काले और बदशक्ल कीडे की तरह मै एक बिल मे से निकल रहा हू और मुझे जमीन पर रेगते हुए देखकर मगल साधु अपने उपले सरीखे हाथ को मेरे ऊपर फैलाकर हस रहा होता है, 'आ, मैं तुझे इस जून से छुडाऊ '

जागता हू—पैरो के पास कई माथे झुके हुए होते है, और मै एक पदवी के आसन पर बैठकर ज़मीन से ऊपर उठ रहा होता हू।

दोनो सिरो के बीच एक गुफा है, बड़ी सकरी और अधेरी। मन्दिर की एक दीवार मे से निकलती गुफा की तरह। और कई बार मैं उन दोनो सिरो से बचने के लिए उस गुफा में घुस जाता हूं।

यह मेरे काले और अन्धेरे ख्यालो की गुफा है। मसलन कभी यह कल्पना करके देखता हू कि मेरी मा ने महत किरपासागर जी स एक बेटे का दान कसे मागा होगा महत किरपासागर जी ने उसके सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखकर फिर वह हाथ धीरे धीरे उसके अगो पर किस तरह फेरा होगा शायद अपनी कोठरी मे जाकर, या शायद मन्दिर के पास लगे पेडो के घने झुण्ड मे फिर सफेद और गेरुए कपडे किस तरह कुछ देर के लिए एक दूसरे मे गुथ गए होगे

तेरी मा एक पुण्यात्मा महत जी के कहे हुए य शब्द गुफा के अधेरे म बडो जोर से हसत हैं और फिर यह हसी एक जीते-जागते वच्चे की शक्ल मे बिलखकर रो पडती है

मैं गुफा से बाहर भी आ जाऊ, तो यह बच्चा उसी गुफा मे पडा घिघियाकर रोता रहता है।

महत जी के स्वगवास की खबर सुनकर, गाव की कोई औरत या मद ही होगा जो उनके आखिरी दशन करने न आया हो। मा भी आई थी। गाव की सभी औरतो ने बारी-बारी महत जी के चरणो पर माथा टेका था और उनकी तरह मा ने भी टेका था पर वह जब महत जी की लाश के परो के पास झुकी थी—मुझे उसके मुह पर दिख रहा था कि उस एक क्षण म उसके मुह की हड्डिया निकल आई थी। मेरा ख्याल है उस वक्त वह जरूर सोच रही होगी कि महत जी के स्वगवास से अगर वह पूरी नही तो आधी विधवा हो गई थी

उसक 'आधी विधवा होने के ख्याल स एक हमदर्दी सी हो आई थी। असल म हुई नही थी, सिफ मैंने सोचा था कि होनी चाहिए थी। और फिर मैं यह सोचने लगा था—आज यह हमदर्दी मुझे अपने साथ भी होनी चाहिए, क्योकि अपने बाप की मृत्यु से मैं सही अर्थों मे अनाथ

हुआ हू। पर यह हमदर्दी मुझे अपने से भी न आई।

चिता को आग दी थी—चेला होने के नाते भी देनी थी, बेटा होने के नाते भी।

एक बदन मे दो नाते शामिल है; सिर्फ मै शामिल नही। न उस वक्त, चिता को आग देते वक्त, शामिल था, न अब।

आज एक अजीब घटना घटी है, कि... शहर से कोई बड़ी अमीर-सी दीखती औरत आई थी। उसके साथ दो दासिया थी जिन्होने मन्दिर मे चढाने के लिए फल और मिठाई उठा रखी थी। वह मन्दिर की इस ख्याति को सुनकर आई थी कि इस मन्दिर मे मानता करने से सूखी हुई कोख भी हरी हो जाती है···

उसके हाथ प्रार्थना मे जुडे हुए थे, "कृष्ण खावे लड्डू-पेडा शिवजी पीवे भग, बैल की सवारी करे पार्वती जी के संग, मेरे भोला नाथ जी, मेरे काज सम्पूर्ण कर "

एक अजीब ख्याल आया था—कहते है, इतिहास अपने आप को दोहराता है। और आज शायद इतिहास ने अपने आप को दोहराना चाहा था

लगा—अभी उसकी प्रार्थना के जवाब मे उसको कह दूगा कि इस स्थान से हासिल किया हुआ बच्चा इसी स्थान पर चढाना होता है। और फिर जब वह 'हा' कर देगी, उसका हाथ पकड़कर उसको अपनी कोठरी मे ··

एक ग्लानि-सी हुई। लगा—इस औरत का हाथ पकडकर जब अपनी कोठरी मे ले जा रहा होऊगा, तब वह मैं नही होऊगा, वह मेरे रूप मे एक बार फिर महत किरपासागर जी मेरी मा का हाथ पकड़कर

उसे अपनी कोठरी मे

इसलिए उस औरत को कुछ नहीं कहा बल्कि घबराकर आखें बद कर ली। उसने शायद यह समझा था कि मैं उसके लिए प्रार्थना कर रहा था, क्योंकि फिर जब आखें खोलीं, वह बडी सन्तुष्ट होकर और प्रणाम करके चली गई थी

मन की अजीब दशा है—मा के साथ हमदर्दी करना चाहता हू—होती नही। फिर यह सोचकर कि इसान की मौत के बाद तो उसके साथ कुछ हमदर्दी हो जानी चाहिए महत किरपासागर जी के साथ हमदर्दी करना चाहता हू पर कुछ नही होता आखिर म एक अपना आप रह जाता है। सोचता हू, तीन पात्रो म एक ही सही पर वह पात्र भी मेरी हमदर्दी का पात्र नहीं बनता

और जसे महत जी के आखिरी दिनो म उनके मुह की सूजन भी उतर गई थी, पर उनकी हालत बिगडती गई थी हकीम ने बताया था कि मसूडा म पडा हुआ मवाद उतरकर अन्दर मेदे मे पड गया है—लगता है, मेरी नफरत भी माथे से उतरकर मरे अन्दर मेरे मन म पड गई है—किसीको कुछ कहना नहीं चाहता, पर मेरे अन्दर से रक्त की तरह कुछ गिरता बिखरता जा रहा है

दस

आइ.मा क पडा पर जब मा पून लगने हैं, मेरी आखें अजाब तरह बेचैन हो जाती हैं। लगता है, यह सिफ मुझपर हसने के लिए निलते है। यह सिफ अब ही नहीं लगता, जब बहुत छोटा था तब भी लगता था कि मैं किसी चटखे हुए पत्थर में से उग आई घास की तरह हू और

शायद किसी को पता नही, पर आडुओ के पेड़ को यह भेद पता लग गया है—और वह ज़ोर-ज़ोर से खिलखिलाकर हस रहा है···

'मेरी जड़ धरती की छाती के भीतर है, तेरी कहा है ?' वह कई बार कहता था, और वडी ज़ोर से हसता था—इतने ज़ोर से, कि उसके कई फूल झडकर मेरे जिस्म पर गिर पडते थे—जैसे हसते-हसते किसी के मुह से थूक गिर पड़े।

मैंने उसके नीचे खडा होना छोड दिया, पास खड़े होना भी छोड दिया। पर वह दूर खडा हुआ भी हस सकता है, इसलिए जव उसकी हसी की आवाज कान मे पड़ती है, मेरी आखे अजीव तरह वेचैन होकर उधर देखने लगती है।

पीपल की जड़ भी धरती मे होती है, और पेडो की भी, पर ये अपने मे मस्त रहते है—अपने हरे-पीले वदन मे लिपटे हुए। आडुओ के पेड की तरह कोई भी खिलखिलाकर नही हसता।

पता नही, उसे इतनी वार हसने की क्यो जरूरत पडती है—जव कि मुझे पता है कि मैं किसी पत्थर की दरार मे से अपने आप उग आई घास का एक तिनका हू, मेरी कोई शाखाए कभी नही निकलेगी, कभी कोई फूल नही लगेंगे, फूलो से कोई फल कभी नही वनेगे ···

अगर वन सकते होते · महत किरपासागर जी ने जव अपनी आखिरी सासे लेते हुए इशारे से अपने पास वुलाया था, उस शाम जो भेद उन्होने मेरे सामने खोला था, उनकी आखो मे एक भेद की लौ थी, इस लौ को शायद वात्सल्य कहते हैं, पर मेरे वदन की नाडियो मे कोई खून नही पिघला था। एक हुक्म मे वधा मैं उनके पास हो गया था, पर उनके वोलते खून के जवाव में, मेरा खून कुछ नही वोला था। उनकी आंखो मे एक धुध-सी आ गई थी, शायद कोई हसरत-सी थी और फिर उन्होने आखे वन्द कर ली थी···मैं पत्थर की दरार में से उग

उसे अपनी कोठरी म

इसलिए उस औरत को कुछ नहीं कहा बल्कि घबराकर आखें बद कर लीं। उसने शायद यह समझा था कि मैं उसके लिए प्रार्थना कर रहा था क्योंकि फिर जब आखें खोलीं वह बडी संतुष्ट होकर और प्रणाम करके चली गई थी

मन की अजीब दशा है—मां के साथ हमदर्दी करना चाहता हू—होती नही। फिर यह सोचकर कि इसान की मौत के बाद तो उसके साथ कुछ हमदर्दी हो जानी चाहिए महत किरपासागर जी के साथ हमदर्दी करना चाहता हू पर कुछ नही होता, आखिर मे एक अपना आप रह जाता है। सोचता हू, तीन पात्रो म एक ही सही पर वह पात्र भी मेरी हमदर्दी का पात्र नही बनता

और जसे महत जी के आखिरी दिना म उनके मुह की सूजन भी उतर गई थी, पर उनकी हालत बिगडती गई थी हकीम ने बताया था कि मसूडा मे पडा हुआ मवाद उतरकर अन्दर मेदे मे पड गया है—लगता है, मेरी नफरत भी माथे से उतरकर मेरे अन्दर मेरे मन म पड गई है—किसीको कुछ कहना नहा चाहता पर मरे अन्दर से रेत की तरह कुछ *गिरता बिखरता जा रहा है*

दस

आडूआ के पेडो पर जब भी फूल लगते हैं, मेरी आखें अजीब तरह बेचन हो जाती है। लगता है यह सिफ मुझपर हसने के लिए खिलते हैं। यह सिफ अब ही नही लगता, जब बहुत छोटा था तब भी लगता था कि मैं किसी चटखे हुए पत्थर म से उग आई घास की तरह हू, और

शायद किसी को पता नही, पर आडुओ के पेड को यह भेद पता लग गया है—और वह ज़ोर-ज़ोर से खिलखिलाकर हस रहा है···

'मेरी जड़ धरती की छाती के भीतर है, तेरी कहां है ?' वह कई बार कहता था, और बडी ज़ोर से हसता था—इतने ज़ोर से, कि उसके कई फूल झडकर मेरे जिस्म पर गिर पडते थे—जैसे हसते-हसते किसी के मुह से थूक गिर पड़े।

मैंने उसके नीचे खडा होना छोड दिया, पास खड़े होना भी छोड दिया। पर वह दूर खडा हुआ भी हस सकता है, इसलिए जब उसकी हसी की आवाज कान मे पडती है, मेरी आखें अजीब तरह बेचैन होकर उधर देखने लगती है।

पीपल की जड़ भी धरती मे होती है, और पेडो की भी, पर ये अपने मे मस्त रहते हैं—अपने हरे-पीले बदन मे लिपटे हुए। आडुओ के पेड की तरह कोई भी खिलखिलाकर नही हसता।

पता नही, उसे इतनी बार हसने की क्यो जरूरत पडती है—जब कि मुझे पता है कि मैं किसी पत्थर की दरार मे से अपने आप उग आई घास का एक तिनका हू, मेरी कोई शाखाए कभी नही निकलेगी, कभी कोई फूल नही लगेगे, फूलो से कोई फल कभी नही बनेगे·· ···

अगर बन सकते होते·· महत किरपासागर जी ने जब अपनी आखिरी सासे लेते हुए इशारे से अपने पास बुलाया था, उस शाम जो भेद उन्होने मेरे सामने खोला था, उनकी आखो मे एक भेद की लौ थी, इस लौ को शायद वात्सल्य कहते हैं, पर मेरे बदन की नाडियो में कोई खून नही पिघला था। एक हुक्म मे बधा मैं उनके पास हो गया था, पर उनके बोलते खून के जवाब में, मेरा खून कुछ नही बोला था। उनकी आंखो मे एक धुध-सी आ गई थी, शायद कोई हसरत-सी थी और फिर उन्होने आखे बन्द कर ली थी···मैं पत्थर की दरार में से उग

भाई घास का एक तिनका-सा हूं मगर एक बीज की तरह धरती को छाती चीरकर उगा होता, जरूर मेरी किसी टहनी पर खून का फूल खिल पड़ता

सुन्दरा ने मां यह आजमाकर देख लिया है। आजमाइश का दिन था—उसकी नहीं, मेरी आजमाइश का।

मेरे लिए क्या हुक्म है? मंदिर के साथ के सुनसान जंगल में उसने मुझे पता नहीं किस तरह ढूंढ लिया था और मेरे पास आकर, यह कहते हुए एक अनुनय से मेरी तरफ देखा था।

मेरा हुक्म? किसलिए?' कुछ समझ नहीं पाया था। सिर्फ यह समझ सका था कि मन्दिर में फूलों की झोली को पलटती हुई वह जब जमीन का हाथ से छूती थी, तो उसकी हथेली मेरे पैरों को छू रही सी लगती थी। यह भुलावा नहीं था।

क्या पूरन इस जन्म में भी सुन्दरा को स्वीकार नहीं करेगा? उसकी आंखों में पानी भरा हुआ था, आंखों में भी और आवाज़ में भी, क्योंकि उसके शब्द भी गीले से लग रहे थे।

'मैं पूरन भी नहीं हूं और राजा का बेटा भी नहीं,' सिर्फ इतना ही कहा था। हैरान था—पत्थर की दरार में से निकले घास के तिनके वाली बात झाड़ियों के पेड़ का पता लग गई थी पर सुन्दरा का क्या पता नहीं लगा थी?

मंदिर में पूजा के समय जब वह फूलों की झोली को पलटता था उसकी बांह फूलों के ढेर में एक सांपिन की तरह पड़ी हुई लगती था, और वह मेरे पैर को जब उंगलियां या हथेली छुआती थी, पर मूर्च्छित सा हुआ लगता था—पर आज ने उसके डंक को अकारथ कर दिया है। भला घास के तृण का भी कभी किसी सांप का जहर चढ़ता है? मुझे उसकी बात का जहर नहीं चढ़ सकता

"मेरी आत्मा ··"वह कुछ ऐसी बात कहने लगी थी, मैं परे उससे दूर-सा होकर खड़ा हो गया। आत्मा और पुण्यात्मा वाली कहानी जो महत किरपासागर जी ने सुनाई थी, वही बहुत थी, इस कहानी को फिर आज सुन्दरा से सुनना नही चाहता था।

"मेरे पत्थर के देवता···"उसने वही दूर से कहा, और फिर जल्दी से चली गई।

सुन्दरा बावली है, रो पड़ी थी, पता नही उसने आडुओ के पेड़ो की तरफ क्यो नही देखा—वह अगर देखती, तो उसे वह भेद मालूम हो जाता कि उस पेड के सारे फूल सिर्फ मुझपर हसने के लिए खिलते थे···

पिछले कई सालो मे मैं कभी आडुओ के पेड के नीचे नही खड़ा हुआ था, आज बडी देर तक खडा रहा, लगा आज जरूर खड़ा होना था, और देखना था कि आखिर उसके फूल मुझपर कितना हस सकते हैं···

ग्यारह

आडुओ के गुलाबी फूलो की हसी, और सुन्दरा की काली स्याह आँखो के आसू अजीब तरह एक-दूसरे में मिल-जुल गए हैं। शायद यह हसी बीज की तरह है, जिसे धरती मे बोकर यह आसू पानी दे रहे है ···· या आंसू गोल बीज की तरह है जिसे धरती मे बीज कर यह हसी पानी दे रही है ··

एक अजीब-सी हमदर्दी मेरे मन में उग आई है—मा को तो भगवान् ने सपने मे दर्शन दिए, भगवान् की तरफ से उसे एक सयोग का हुक्म मिला, महत किरपासागर जी ने भगवान् का हुक्म मान लिया, और दोनो ने मिलकर कुछ प्राप्त कर लिया। पर वह तीसरा आदमी ·

जो मेरी मा का पति है पर मेरा बाप नही उस बेचारे ने क्या प्राप्त किया सिफ एक भुलावा कि मैं उसका बेटा हू चाहे उसके आगन म नही खेला चाहे उसके खेतो मे उसका हल नही चलाया, पर उसके वश का चिराग हू

क्या चिराग जसा श द भी इतना काला और अधियारा हो सकता है

लगता है—मा ने एक अधेरा चुराया, जब तक अधेरे को अपनी कोख म छुपा सकती थी छुपाये रखा। फिर जब छुपाया न गया, उसकी एक पोटली बाधकर उस गरीब आदमी के सामने जा रखी—देख ! मैं तेरे घर का चिराग ढूढकर लाई हू।

चिराग क्या होता है—मिट्टी की एक कटोरी सी थोडा सा तेल थोडी सी रुई। वह तो था ही। सिफ आग नहा थी। आग एक सच्चाई होती है पर झूठ भी शायद सच्चाई की तरह बलवान् होता है और वह भी अपने हाथो की रगड म से आग की चिगारी पदा कर सकता है

चिराग जल गया। पर एक फक मैं देख सकता हू—इस चिराग की रोशनी म जो राह नजर आती है उस राह पर एक भयानक खामोशी है और एक भयानक एकाकीपन।

इस चिराग से जिसका भी सम्बध है सब उस राह पर चल रहे है पर सब एक दूसरे से अपनी आखो को चुराते हुए और अपने अस्तित्व को भी चुरात हुए सब एक दूसरे से टूटे हुए और अपने अपने एकाकीपन का भोगत हुए

हमदर्दी जसे श द को मा के साथ जोडना भी चाहू ता भा नही जुडता। महत किरपासागर जी के साथ भी नही जुडता। सिफ कुछ जुडता है—तो उस बेचारे आदमी के साथ जो दुनिया की नजर म मरा बाप है।

वाप शब्द से ख्याल आया है कि अगर मैं इस शब्द को उस वेचारे आदमी पर से उतार दू—(मुझे लगता है इस शब्द को उसने एक गठरी की तरह उठाया हुआ है)—और इस शब्द का भार मैं महत किरपासागर जी के सिर पर रख दू, फिर ?

पर अब वह भी नही हो सकता। अगर महत किरपासागर जी जीवित होते, तो मैं शायद किसी दिन यह कर देता। पर अब यह भार मैं उनकी लाश के सिर पर कैसे रख दू ?

आज सुबह मन्दिर के कार्यो से निवटकर, मेरे पैर जवरदस्ती उस खेत की तरफ चल पडे थे, जहां वह 'वेचारा' आदमी हल चला रहा था। पता नही, उसने क्या समझा होगा, पर मैंने उसके हाथ से उसका काम पकड़ लिया था। सूरज जब तक शिखर पर नही आया था, मै उसके खेतो में उसके एक मजदूर की तरह लग रहा था···उसके काम का वोझ हलका नही कर रहा था, सोच रहा था, शायद ऐसे ही उसके सिर पर उठाये हुए शब्द का भार कुछ हल्का हो जाए···

उसका मुझे पता नही, पर मेरा अपना आप कुछ हल्का-सा हो गया है—खेत के पास बहते पानी मे जव मैंने अपने हाथ धोए थे, लग रहा था—वदन से कुछ धोया जा रहा था। कन्धे की चादर से जब माथे का पसीना पोछा था, लग रहा था—लेस की तरह लगे हुए एक रिश्ते का कुछ हिस्सा मैंने आज पोछ दिया था···

अगर मैं रोज़ इसी तरह कुछ पोछता रहू, तो शायद किसी दिन सब कुछ पोछ दिया जाएगा ··

हे भगवान् ··

मैंने यह सोचा ही नही कि अगर मैं रोज उसके खेत मे जाकर उसकी गोड़ाई या जुताई करूगा, तो गाव वाले रोज देखेगे, और तब लेस की तरह लगा हुआ यह रिश्ता दिनो-दिन छूटेगा या और पक्का

सुन्दरा नही जानती, पर यह भी एक रिश्ता है

वही रिश्ता जो हवन कुण्ड के साथ होता है

मैं कुण्ड हू, पाराशर स्मृति के अनुसार पति के जीते जी जो स्त्री किसी और से सन्तान लेती है उस सन्तान का नाम कुड होता है

किसी कुण्ड मे जो कुछ पडे वह दग्ध हो जाता है

मुझे प्यार करके सुन्दरा अपना हवन करना चाहती थी। वह नही जानती पर मैंने उसे हवन की सामग्री होने से बचाया है

तेरह

मा औरत के रूप मे होती है पृथ्वी के रूप मे भी। विष्णुपुराण मे कथा आती है कि विष्णु ने जब वराह का रूप धारण किया तो पृथ्वी ने उसके साथ भोग करके नरक नामक पुत्र पदा किया।

सो यह कहानी सिफ मेरी नही, आदि युगादि की है।

और आदि युगादि से यह नरक पदा होते रहे हैं।

भोग करने वाला का क्या है उनका खेल उनको नही भुगतना पडता यह सिफ नरको का भुगतना पडता है। यह सिफ मुझे भुगतना है

आज सुबह मा जब मन्दिर में आई थी सोच रहा था, उसको प्रणाम करू। बिल्कुल इस तरह जिस तरह कोई पृथ्वी को प्रणाम करता है।

पृथ्वी ने जब नरक पदा किया था, तो किसी ने भी पृथ्वी का निरादर नही किया था, सो मुझे भी उसका निरादर करने का क्या हक है ?

मेरी मां साक्षात् पृथ्वी है।

मुलफा बहुत अच्छी चीज़ है। मैंने आज तक नही पिया था। गोविन्द साधु के हाथो से चिलम पकड़कर आज मैंने थोड़ा-सा ही पिया कि आनन्द आ गया। अजीब-अजीब बाते भी सूझ रही हैं...

अभी चरपट योगी की कथा याद आई है कि चरपट योगी का जन्म योगी मछेन्द्रनाथ की दृष्टि से हुआ था—भोग से नही, सिर्फ दृष्टि से।

और क्या पता मेरा जन्म भी महन्त किरपासागर जी की सिर्फ दृष्टि से हुआ हो...

लगता है, महत किरपासागर जी भी योगी मछेन्द्रनाथ की तरह सिद्ध पुरुष थे। सो सिद्ध पुरुषो को प्रणाम करना चाहिए...

मुझे अफसोस है कि मैंने महत किरपासागर जी को कभी जीते जी ऐसे प्रणाम नही किया था। चरपट योगी ने मछेन्द्रनाथ को जरूर प्रणाम किया होगा। मुझे चरपट योगी से यह शिक्षा लेनी चाहिए थी...

चरपट योगी मेरे बड़े भाई की जगह है...पता नही यह ख्याल पहले क्यो नही आया ..उसका जन्म भी ऐसे हुआ था, जैसे मेरा...सो हम भाई-भाई है ..आज मैं बहुत खुश हूं...आज इतिहास के पन्नो मे से मुझे मेरा भाई मिल गया है .

गोविन्द साधु पता नही कहां अलोप हो गया है। अभी नागफनी की झाड़ी के पास बैठा चिलम पी रहा था। कही साईं भगतराम ही दिख पड़े तो कहूं कि चिलम मेरे लिए भी भर ला। चिलम के दो घूंट से ही आनन्द आ गया...

आनन्द की तृष्णा भी अजीब चीज़ है...यह मैं किस तरह बैठा हुआ हूं, किस मुद्रा मे ? ओह, याद आया—यह भद्रा मुद्रा है। टखनो को मोड़-

कर अपने नीचे रखकर बठने की मुद्रा। योगियो का आसन

पता नही मेरे नीचे क्या बिछा हुआ है मरा ख्याल है मद्रासन होगा बहुत सख्त है मद्रासन होता ही सत्त है बल का चमडा इस आसन पर बठने वाले लोगो की भलाई के लिए बठते है लोगो के कल्याण के लिए मैं किसका कल्याण करूगा ? क्या आसन पर बठने वाले अपना कल्याण नही कर सकत ?

एक अजीब बू आ रही है शायद वल के चमडे की है नही यह मेरे जिस्म म से आ रही है हाथो मे स बाहो म से छाती म से मछली की बू की तरह मत्स्यगन्धा वह कौन थी मत्स्योदरा ? वह जो वसु राजा के वीय मे मछली के पेट म से जन्मी थी ? उसे भी जरूर अपने जिस्म मे से मछली की बू आती होगी मेरी मा भी शायद मछली है मैं मछली के उदर से पदा हुआ हू एक दिन महत किरपा सागर जी समाधि म लीन थ पता नहा महाभारत म किसी ने यह कथा क्यो नही लिखा

व्यास ने महाभारत लिखते समय जरूर भाग पी रखी होगी नहीं सुलफा पी रखा होगा कोई साइ भगतराम उसकी चिलम भर रहा होगा और वह लिखता गया होगा आज साइ भगतराम ने कमाल की चिलम भरी है मैं भी महाभारत लिख सकता हू

महाभारत का क्या है जो मरजी आए लिखते जाओ जहा कुछ समझ न आए वहा जो जा चाहे लिख दो शुक्र ब्रह्मा का बेटा था पर शुक्र की मा नही थी वह एस ही पदा हो गया था। ब्रह्मा एक यज्ञ करवा रहा था वहा देवताओ की बहुत सुन्दर पत्निया आई हुई थी तो उनको देखकर ब्रह्मा का वीय गिर गया। सूरज ने उस वीय को इकट्ठा कर लिया और अग्नि म उसका हवन किया। तो उसी वक्त अग्नि मे स तीन सुन्दर बालक निकल आए देवताओ ने एक बालक शिव को दे दिया

खामखाह···एक अग्नि को दे दिया···वह भी खामखाह ··और एक उसके असली बाप को दे दिया, ब्रह्मा को, यही बालक शुक्र था···

तो बाप का क्या है, बाप पर कोई दोष नही लगता·· इसलिए बाप का नाम याद रख लेना चाहिए···दोष सिर्फ मा पर लगता है, सो मा का नाम भूल जाना चाहिए···बच्चे का क्या है, वह कही भी पैदा हो सकता है—मछली से भी, पृथ्वी से भी, अग्नि से भी· मैं जब महाभारत लिखूगा, तो लिखूगा कि मैं सुलफे की चिलम मे से जन्मा था···

खूब वक्त पर ख्याल आया है कि बच्चे की पैदाइश के लिए इन्सान का वीर्य भी ज़रूरी नही· पद्मपुराण मे लिखा है कि मगल विष्णु के पसीने से पैदा हुआ था···वामनपुराण मे लिखा है कि शिव जी के मुह में से एक थूक गिरा और उस थूक में से एक बालक जन्मा था···

· सो मैं अपने जन्म की कथा लिखूगा कि एक दिन महत किरपासागर जी सुलफे की चिलम पी रहे थे · मुह से एक थूक गिरकर चिलम मे पड़ गया · और मैं सुलफे के धुए की तरह चिलम मे से निकल पडा

यह सब सम्भव है·· अयोध्या के सूर्यवंशी राजा सगर की रानी सुमति को और्व ऋषि के वर के अनुसार साठ हज़ार पुत्र पैदा होने थे, ऋषि की वाणी थी, इसलिए सुमति के गर्भ से एक तुम्बा जन्मा, जिसमे साठ हजार बीज थे। राजा ने साठ हज़ार घी के घडे भरकर, उनमे एक-एक बीज रख दिया—दस महीने बाद हर घडे मे से एक-एक बालक निकल आया

यह हरिवशपुराण की कथा है, इसलिए सच है। सच किसी काल मे भी हो सकता है। इस काल में यह भी सच है कि एक दिन महत किरपासागर जी सुलफे की चिलम पी रहे थे, मुह मे से एक थूक गिरकर चिलम मे पड गया, और एक बालक, सुलफे के धुएं की तरह चिलम मे से निकल पडा ·

यह कैसा ज्ञान है जो मुझे प्राप्त हो रहा है···

भुशुडि नाम के एक ब्राह्मण को जब लोमश ऋषि ने शाप दिया था तो उसके श्राप से वह एक कौआ बन गया था, पर कौआ बनते ही उसको एक ज्ञान प्राप्त हो गया था और फिर वह चिरजीवी होकर सब ऋषियो को कथा सुनाता रहा

मैं भी शायद उसकी तरह कागभुशुडि हू मुझे भी एक ज्ञान प्राप्त हुआ है मैं भी समय का एक कथा सुना रहा हू

चौदह

सुना—मा बहुत बीमार है। कुछ दिना से मन्दिर मे देखी नही थी। कुछ ऐसा ही ख्याल आया था पर जिस बात को खबर लेना कहते हैं, उस बात का ख्याल नही आया।

आज उसने अपनी किसी पडोसिन को भेजा था—"एक बार मुह दिखा जा। यह मर बत्तीस दाता म स निकला मिन्नत है।"

उस वक्त मैं मन्दिर मे खडा था शिव और पार्वती की मूर्ति क पास और लगा यह श द सुनकर मैं भी पत्थर की तरह हो गया था—परो को उठाकर चलन की जगह वहा पत्थर की तरह हो जाना आसान लगा था।

यह सुबह की बात है। दोपहर के समय वह पडोसिन फिर आई थी, 'मरने को पडी है, कहती है—एक बार मुह दिखा जा। तुझे मेरे दूध की बत्तीस धारो की सौगन्ध '

बत्तीस दात बत्तीस धारें लगा, उसके पास बत्तीस की गिनती बहुत भारी थी और अचानक ख्याल आया कि स्कन्दपुराण के काशाखण्ड म औरत क बत्तीस शुभ लक्षण मान गए हैं

इकतीस के बारे मे कुछ नही कह सकता पर एक के बारे म जरूर

कह सकता हू। वत्तीस मे से एक लक्षण निष्कपटता भी है।

सोचा, जाना है, इसलिए जाऊगा। दूध की वत्तीस धारो का कर्जा लौटाने नही, और न ही वत्तीस दातो में से निकली मिन्नत को सुनकर, सिर्फ एक मन्दिर का साधु होने के नाते, जिसे गाव मे से आए किसी मर्द या औरत के वुलावे पर जरूर जाना होता है।

सिर्फ यह ख्याल ज़रूर आया कि उसने अपने आखिरी वक्त या मुश्किल की घडी मे, जो मेरे मुह से कोई साधु-वचन सुनना चाहा, तो मै यह कह सकूगा, 'भली औरत ! तुझमें औरत के वत्तीस शुभलक्षणो मे से शायद इकत्तीस ही होगे, पर मैं वत्तीसवे की वात करता हू—निष्कपटता की। जिस मर्द के नाम के नीचे तूने सारी जिन्दगी गुजारी है, अगर आखिरी वक्त तू उसके साथ निष्कपटता वरत ले···'

जाते वक्त कोई और ख्याल नही आया था। सिर्फ एक ख्याल था, यही ख्याल जो मैं सुलफे की तरह पीता गया था। और एक क्रोध-सा था जो सुलफे के धुएं की तरह निकल रहा था ·

अव आती वार ख्याल आ रहे है, यह भी कि सुलफे का जो नशा मेरे सिर को चढा हुआ था—एक दम का नशा था। शायद दम को भी सुलफे की तरह पिया जा सकता है···

और यह ख्याल भी आ रहा है—वत्तीस शुभ लक्षण सिर्फ औरत के ही नही होते, मर्द के भी होते हैं। और उन वत्तीस मे से एक लक्षण उदारता भी होता है, क्षमा भी। मैंने उसके शुभ लक्षणो की गिनती करके उसको सुना दी, पर यह गिनती मैं अपने लिए भी तो कर सकता था···

क्या उदारता और क्षमा वाला लक्षण मुझमे नही होना चाहिए ?

उम्र के वरसो की तोडी हुई एक औरत, वडी दीन-सी होकर, और हारकर, चारपाई के वान से लगी हुई थी, और मैं परे एक आसन पर चावल के माड की तरह अकड़कर वैठ गया था।

चलो, बठ भी गया था, तो चुप ही रहता

उसने मुझे हाथ से छूना चाहा था—बढ़कर, पता नही पैरो का कि सिर को, पर उसका हाथ बीच म ही लटका रह गया था

कुछ झुर्रियां थी जो हवा म लटक रही थी

मास के बलो मे पता नहीं जिन्दगी का क्या कुछ लिपटा होता है

परे आसन पर बठे हुए मुह पर शायद निदयता जसी कोई चीज थी लगा—उसने देख ली थी और उसकी आखो म पानी भर आया था।

शायद वह सोचती थी कि आखो के पानी स वह मेरे मुह पर से इस निदयता को धो सकती थी

पर यह मेरे मुह पर जो कुछ भी उसे दिखा था धूल की तरह उड़कर पडा हुआ नही मास क रोम की तरह उगा हुआ है।

वही बात हुई जो मैंने सोची था। मेरी खामोशी तोडने के लिए उसने कहा— मेरे लिए कोई वचन।

वचन मैं सोचकर गया था। इसलिए कह दिया—' निष्कपन्ता।

लगा उसके मुह की सब झुर्रिया मेरी ओर देखने लगी थीं।

उस वक्त कोठरी मे वह अकेली थी। मैं था पर मेरा मतलब है उसका पति उसका दीनानाथ—उस वक्त बाहर ओसारे मे था अन्दर उसके पास कोठरी म नहीं था।

मैं जानू या मेरा परमात्मा। मैं निष्कपट हू' उसकी बहुत धीमी सी आवाज आई थी।

सुनकर हसी सी आ गई थी।

उसकी आखों म कुछ फल गया था। शायद खौफ जसी कोई चीज था। वह एकटक मेरी तरफ देख रही थी और उसकी आखों म वह खौफ शीशे की तरह चमक पड़ा था। और फिर लगा था—वह शीशे की तरह चटख गया था शायद पिघल गया था

उसकी आखो से कुछ पानी पिघले हुए शीशे की तरह वह रहा था।

उसने खाट की वाही पर छाती का भार डालकर अपनी वाह को लटकाया—मेरे आसन का एक कोना हथेली से छू लिया। आसन का कोना भी, उसके साथ लगा मेरा घुटना भी।

घुटना जल-सा उठा, एक क्रोध से। हथेली को घुटने से झटक सकता था, पर गुस्से की वडी गरम लकीर, घुटने से लेकर जवान तक फैल गई थी, इसलिए जवान तिलमिला गई। कह दिया—"महत किरपासागर जी ने आखिरी वक्त यह 'निष्कपटता' मुझे वता दी थी।"

वहुत साल हुए, एक वार गोविन्द साधु ने एक साप मारा था। उसका डडा जव साप की कमर मे धसा हुआ था, और साप के सिर वाला हिस्सा, और नीचे धड वाला हिस्सा दो अलग-अलग हिस्सो मे तड़प रहे थे—मैं उसके पास खड़ा, उसको देखता, एक ग्लानि से भर गया था। उस दिन मुझे साप पर नही, गोविन्द साधु पर वडा गुस्सा आया था। साप तडप रहा था, गोविन्द साधु तमाशा देख रहा था।

लगा, मेरी वात सुनकर, वह भी साप की तरह तडप उठी थी, मेरी वात लकडी के एक डडे की तरह उसकी पीठ में धस गई थी, और जिसके वोझ के नीचे वह गुच्छा हुई अजीव तरह टूट रही थी। अपने आपसे भी एक नफरत हुई। अपने आपसे भी, उस वात से भी, और उस वात की चोट से तडपती उसकी जान से भी।

एक मरते हुए इन्सान को मैं कैसी शान्ति दे रहा था? मुझे पता था, मैं एक वदला ले रहा था, पर यह कैसी घडी थी वदला लेने की?

और सवसे अधिक नफरत अपने आपसे हुई। अपने अस्तित्व से। जैसे मेरा अस्तित्व नफरत का एक टुकडा हो···

हिल-सा गया था।

फिर यह ख्याल भी आया—जो मैं नफरत का एक टुकड़ा था तो मास के इस टुकड़े को जन्म देने वाली मां ? यह एक बच्चे की मां नहीं एक नफरत की मां थी।

और मैं फिर अडोल-सा हो गया।

कोठरी में एक खामोशी छा गई थी।

यह खामोशी शायद बहुत भारी थी पत्थर की शिला की तरह। इसको न मैं हटा सकता था, न वह।

पर मेरा ख्याल गलत निकला, उसने खामोशी की शिला तोड़ी और कहा—मुझे पता था एक दिन मुझे अग्निकुण्ड में नहाना होगा

मैंने कुछ हैरान होकर उसके मुंह की तरफ देखा।

अचानक उसने अपनी मिन्नत-सी करती हथेली मेरे घुटने पर से हटा ली। और बड़ी शान्त होकर अपनी खटिया पर आराम से लेट गई।

अब उसकी आवाज भी बड़ी शान्त और अडोल थी। उसने सहज भाव से कहा—कई बार लगता था कि सीता की तरह मुझे भी अग्नि परीक्षा देनी पड़ेगी

लगा—यह बोल महंत किरपासागर जी के उन बोलों के साथ मिलते थे—तेरी मां एक पुण्यात्मा है उसे कभी दोष न देना स्वयं भगवान् ने सपने में उसे दर्शन दिए '

पर यह बात शायद जान-बूझकर मिलाए गए थे। मुझे कभी भी भगवान् के इन दर्शनों वाली बात पर विश्वास नहीं हुआ था। और लगा अब मां भी अगले वाक्य में इन दर्शनों वाली बात को दुहरा देगी

इन्सान अपने किए को अपने हाथ में न पकड़ सके, तो बड़ी सीधी-सी बात है कि यह भगवान् के हाथ में पकड़ा दे

पर उसने कुछ नहीं कहा।

इसलिए मुझे, खुद, कहना पडा—"भगवान् ने सपने मे दर्शन दिए, सिर्फ यही कहने के लिए ?"

वह सचमुच हम दी, "नही, मेरे लाल ! मेरे ऐसे करम कहा थे कि भगवान् मुझे सपने मे दर्शन देते, और कुछ कहते ।"

लगा—दर्शन वाली वात महत किरपासागर जी ने मेरे मन को वहकाने के लिए वनाई थी ।

और लगा—एक झूठ था, जो इस कोठरी मे पडी हुई खटिया पर से रेगता-रेगता, एक मरे हुए इन्सान की समाधि तक पहुंच गया था ।

पर मैं झूठ और सच को नितारना क्यो चाहता था ? अपने पर एक खीझ-सी आई । और लगा अगर यह लोग किसी झूठ पर कुछ खाड-सी लपेटकर मुझे खिलाना चाहते है, तो मैं इसे खा क्यो नही लेता ? आखिर भगवान् के नाम को खाड की तरह पीसने के लिए, इन वेचारों ने कितना कुछ किया है···

"अग्नि-परीक्षा, कभी किसी पति की आज्ञा थी, आज पुत्र की आज्ञा है· "

लगा—वह अपने आपसे वाते कर रही थी ।

फिर एक गुस्सा-सा आ गया—झूठ को खिलाना भी जरूर है, पर दूसरे से यह भी कहलवाना है कि यह वहुत मीठा हे !

उसने मेरे गुस्से को नही जाना, कहती गई—"मेरे ऐसे करम नही थे जो भगवान् मुझे दर्शन देते । मैंने सिर्फ उसकी आज्ञा मानी थी, जिसको मैंने सारी उम्र भगवान् समझा । दर्शन उसे हुए थे, मैंने सिर्फ उसकी आज्ञा मानी ।"

दरवाजे के पास खटका-सा हुआ । लगा अव वह विल्कुल चुप हो जाएगी, क्योकि अव उसका पति अन्दर कोठरी मे आ गया था ।

"हकीम से तेरे लिए एक और पुड़िया लाया हू···" उसने कोठरी

रे आते हुए कहा। और कहा, 'हकीम ने कहा है कि आज का दिन कष्ट का है अगर आज का दिन कुशलता से गुजर गया तो "

'हा आज का दिन ही कष्ट का था ' लगा वह हस रही थी और फिर उसने अपनी चारपाई पर से हाथ म दवा की पुडिया लेकर, खडे हुए अपने पति के परो की तरफ अपना हाथ बढाकर कहा— मैं तेरे, अपने भगवान के हाथो म इस दुनिया से चली जाऊ मुझे इससे ज्यादा कुछ नही चाहिए एक इस बेटे का मुह देखने के लिए जान अटकी हुई थी वह भी देख लिया अब मुझे शान्ति मिल गई है और हाथ के इशारे से उसने पुडिया खाने से इनकार कर दिया।

शाम का अधेरा उतर आया था। और फिर लगा, वह सो-सी गई थी। मैं उठकर बाहर आ गया।

बाहर ओसारे म वह लालटेन की चिमनी पोछ रहा था। उसने एक बार मेरे कन्धे पर हाथ रखकर मुझे प्यार-सा किया। लगा हाथ कुछ झिझक-सा रहा था।

झिझक को समझ सकता था पर हाथ की मेहरबानी को समझ नहीं सकता था। कुछ हैरान होकर उसकी तरफ देखा। लगा वह कुछ कहना चाहता था पर फिर वह कोठरी की तरफ देखकर चुपचाप लालटेन की चिमनी पोछने लगा।

एक सन्देह-सा हुआ—जसे वह सब कुछ जानता था। और मुझसे कहना चाहता था—मैंने क्षमा कर दिया है मैं, एक आम दुनियादार इन्सान होकर और तू उसे क्षमा नही कर सकता ?

मैंने एक बार अपने वेश की तरफ देखा—सिर स पाव तक मैंने गेरुआ भगवान् के नाम वाला वेश पहना हुआ था। और लगा उसके सफेद कपडे मेरे वेश को एक उलाहना-सा दे रहे थे

एक बार फिर पलटकर देखा—वह ओसारे मे खडा एक सफेद

ड़े के टुकड़े से अब भी लालटेन की चिमनी पोछ रहा था। चिमनी ा नही कब की धुआई हुई थी, या कोई काला-सा धब्बा चिमनी पर उतर नही रहा था···

पंद्रह

यह कैसा अधेरा है, कही खत्म ही नही होता···

कोख का अंधेरा हर कोई झेलता है। पर उसका एक गिना-चुना मय होता है। और वह जैसे-तैसे गुजर जाता है। पर मेरा यह अधेरा ुजरता क्यो नही ? क्या समय मुझे अधेरे की कोख मे डालकर फिर निकालना भूल गया है ? और मुझे, अधेरे की कोख मे पडे हुए ही बरस र बरस गुज़रते जा रहे है ?

साई भगतराम एक दिन एक मूर्ख पडित की कथा सुना रहा था— कि एक गाव की स्त्रिया जब एक पडित से तिथि-त्यौहार पूछने जाती— और मूर्ख पडित से जन्त्री न पढी जाती, तो वह बहुत कच्चा पड़ जाता। आखिर उसने सोच-सोचकर एक उपाय ढूढा। मिट्टी की एक कुलिया रख ली, और पडवा का दिन पूछ-पुछाकर, उसने अपनी बकरी की एक मेगनी उस कुलिया मे डाल दी। दूसरे दिन एक और मेगनी डाल दी, तीसरे दिन एक और। इस तरह रोज एक मेगनी वह याद से उस कुलिया मे डाल देता। जब कोई स्त्री तिथि पूछने आती, वह कुलिया की मेगनी गिनता, और उसके मुताबिक बता देता कि उस दिन क्या तिथि थी। कुलिया मे एक मेगनी होती तो पडवा होती, दो होती तो दूज, तीन होती तो तीज·· सो काम चलता गया। पर एक दिन पडित जी की कुलिया कही आगन मे पड़ी रह गई, और आगन में खड़ी

बकरी न जब मेंगनी की ता कुलिया मुह तक भर गई। अगले दिन एक स्त्री तिथि पूछने आई, पडित ने कुलिया देखी, तो मगनियों की गिनती ही न हो स्त्री ने स्वय ही कहा होनी तो आज नौमी है।' पडित जी ने भी उस समय टालने के लिए कह दिया है तो नौमी पर अपार नौमी है।

मन की हालत रमामी सी है। पर यह हास्यास्पद बात याद आ गई है। लगता है, समय भी एक मूर्ख पडित है। मेरी कारो अधेरे दिना की गिनती करता हुआ अपनी कुलिया को रात आगन म ही रख गया था—और अब मेरी नौमी का अपार-नौमी कहकर अपनी मूर्खता छुपा रहा है।

अपार अधेरा।

और लगता है—कोख मे से निकलकर मैं सीधा मदिर की गुफा मे आ गया हू और गुफा पता नही कितने सौ साल लम्बा है।

हर सवाल अधेरे की उपज होता है—सिर्फ यह बात अलग है कि सवाल छोटा हो तो वह एक बालक की तरह घुटए घुटए चलता है और रोता है पर अगर बडा हो तो वह काली दीवारो को हाथो स टटोलता और उनम सिर पटकता है

कोख क अधेर म मैंने सिर्फ हाथ पर ही मारे होगे मैंने ता घुटए चलना भी गुफा के अधेरे म सीखा था और अब मरे माथे की जवाना गुफा की दीवारा स सिर मार रही है

अधेरा उसी तरह है—सिर्फ सवाल बडे हो गए हैं—मरे अगा की तरह

सोलह

आज गले में पहना हुआ ढीला-सा चोला भी मेरे अगो में फसता-सा लग रहा था···

अगो की गोलाइयो मे जैसे कुछ नोके निकल आई हो···

कई बरस हुए, जब एक स्कूल में पढता था, एक दिन मेरा एक सहपाठी लडका हसी-खेल मे मुझे एक लारी मे विठाकर पठानकोट ले गया था।

पठानकोट के खुले बाजारो में नही, सकरी गलियो मे। और वहा उन गलियो मे औरते ही औरते थी—छोटी-छोटी चादी की मुरकिया पहने, स्कूल मे पढती लडकियो जैसी भी, और होठो पर ददासा मलकर बैठी हुई बडी-बडी स्त्रिया भी, और दहलीजो मे बैठकर हुक्का पीती बडी-बूढिया भी।

कही कोई मर्द नही था। जैसे छोटी स्त्रियो को बडी स्त्रियो ने आप ही जन्म दिया हो।

हम दोनो लडके, स्कूल मे पढती उम्र के, वहा खोए-खोए-से लगते थे—या गुल्ली-डडा खेलते अपनी खोई हुई गुल्ली को ढूढते-ढूढते, वहा, उन गलियो मे पहुच गए लगते थे।

बूढी स्त्रिया हुक्के की गुडगुड की तरह मुझे हसती लगी थी। अभी यह खैर थी कि मेरे साथी ने लारी मे चढने से पहले मेरे गेरुए चोले को गले मे से उतरवाकर अपनी एक कमीज़ और एक सफेद पजामा मुझे पहना दिया था। उसका बन्दोबस्त वह पहले ही करके आया था। सुबह घर से आते समय दोनो कपडे अपने बस्ते मे डाल लाया था।

वह उन औरतो का कुछ वाकिफ भी लगता था। एक-दो को उसने "मा, राम सत" भी कही थी।

कई बार यह भी सोचना चाहा कि यह मैं नही था, मेरे दोस्त का सिर्फ कमीज़-पजामा था जो लारी मे बैठकर वहा गया था, पर वह कमीज़ पजामा गले से उतारकर भी सारे कुछ का दोष गले से नहीं उतार सका था।

फिर यह भी सोचना चाहा था कि इसमे इतना दोष नही था। दोष सिर्फ सस्कारो मे था। तो भी इसको दोहराने का कभी ख्याल नही आया था।

यह ख्याल सिर्फ आज आया था। आज गले मे पहना हुआ ढीला चोला भी अगो से अटकता लग रहा था। अगो की गोलाइयो मे जैसे कुछ नोकें निकल आई हो।

और मुझे लगा—आज मेरी हड्डिया किसी बौराए हुए बल के सीगो की तरह तनी हुई है जो किसीके पहलू मे धसना चाहती थी

गाव से बहुत दूर जाकर गेरुए चोले को उतार दिया। कपडे की एक पोटली सी बाधकर साथ ले गया था—धारियो वाला पजामा लकीरो वाली कमीज़ और सिर पर लपेटने के लिए एक लम्बा-सा अगोछा

भेष बदल गया। लारी मे बठकर सोचा कि वह मैं नही था, वह एक भेष लारी म बठा हुआ था

पर वहा पहुचकर किसी सकरी गली की तग कोठरी म बैठकर, जब किसी लाल या काशनी रग म डूबना चाहा उसके किनारे पर ही पैर अड गए।

अगो का सारा तनाव जसे अगो से निकलकर परो म आ गया था।

पर जमकर खडे हो गए।

परो को देखना चाहा, दिखे नही। वह काल्पनिक फूलो के ढेर में छुपे

हुए थे।

"तू यह फूल क्यो लाई है ?" शायद मैंने वहुत गुस्से से कहा था।

कोठरी मे से एक सहमी-सी आवाज़ आई थी—"फूल कहा है ? यहां कोई फूल नही। मैं कोई फूल नही लाई हू।"

पर वहां फूलों का एक ढेर लगा हुआ था—इतना वड़ा कि मेरे दोनो पैर उसमे ढके हुए थे। मैं न अपने पैरो को देख सकता था, न हिला सकता था।

किसीने उस कोठरी में मेरी सहायता भी करनी चाही थी, मेरी वाह पकड़कर मुझे वहा से हिलाना चाहा था, शायद वैठाना चाहा था, शायद कही ले जाना चाहा था…

पर दोनो पैरो के ऊपर कोई हथेलिया भी छू रही थी…

और पैर उन हथेलियो की छुअन से शायद मूच्छित हो गए थे…

मूच्छित पैरो को शायद आगे नही वढ़ा सकता था, पर पीछे घसीट सकता था।

घसीट-घसाटकर फिर अपने डेरे मे लौट आया हूं।

अगो की गोलाइयो से सभी नोके झड गई है और मेरा गेरुआ चोला सहमकर मेरे गले से लगा हुआ है।

सारा वदन सूखा है—किसी रंग में नही डूवा। और शायद इस सूखेपन को पवित्रता कहते हैं…

पर पैर सीले है। शायद वहुत देर गीले फूलो के ढेर मे पड़े रहे थे इसलिए।

या शायद पैरो की आखो मे आसू आ गए हैं…

सुन्दरा…सुन्दरा…जादूगरनी! आज तूने यह मेरे साथ क्

किया है ?

यह 'क्या मेरी देह से बाहर है पर फिर भी मेरी देह क अन्दर है

स्कदपुराण म कथा आती है कि सूरज की एक पुत्री छाया के गम से पदा हुइ। क्या सूरज क मोग के समय भी छाया का अस्तित्व कायम रहा था ? जरूर रहा होगा, नही तो उसका नाम छाया कस होता।

तो सूरज के सम्मुख होकर भी छाया का अस्तित्व सम्भव है ? मैंने सुन्दरा को त्यागा था, पर उसका अस्तित्व इस त्याग के सामने भी खडा है

कुछ रिश्ते कसे होते हैं जो हर हाल म रहते हैं। स्वीकृति म स जन्मते कायम रहते ठीक था। पर यह अस्वीकृति म स भी जन्म ले लेते है, और सिर्फ जन्म नही लेते, इन्सान की उम्र के साथ भी जीते हैं और उम्र के बाद भी जीते हैं

ब्रह्मववत पुराण की एक कथा याद आई है—विष्णु को शखचूड की स्त्री तुलसी का सत भग करना था, इसलिए एक दिन उसने शखचूड का रूप धारण किया और तुलसी के साथ भोग किया। तुलसी को जब इस छल का पता लगा उसने विष्णु को शाप दिया कि वह पत्थर हो जाएगा। विष्णु ने भी उसे शाप दिया कि उसके सिर के बाल तुलसी का पौधा बन जाएगे। और उसका शरीर गडका नदी बन जाएगा। गडका नदी म से अब तक जो पत्थर मिलते है व विष्णु का रूप है—शालग्राम। वह रिश्ता अब तक कायम है। यहा तक कि लोग कार्तिक की अमावस को तुलसी की पूजा करते तुलसी के पौधे का और शालग्राम का विवाह रचाते हैं

यह कैसे शाप थे जिन्होंने वर का रूप धारण कर लिया ? सुन्दरा का त्याग पता नहीं वर था कि शाप। पर जो कुछ भी था वह कायम

है। मेरी देह से बाहर है, पर फिर भी मेरी देह के अन्दर है···

शायद वरदान और शाप भी सूरज और छाया की तरह एक ही समय, एक ही जगह, इकट्ठे रह सकते हैं···

पृथ्वी का नाम, जिस राजा पृथु के नाम से पडा, उसका जन्म उसके मरे हुए पिता वेणु की दाई जाघ मे से हुआ था—वेणु धार्मिक राजा नही था, इसलिए ऋषियो ने कुश के तिनको से मार-मारकर उसे मार दिया, पर राज-काज के लिए आखिर किसी की ज़रूरत थी, इसलिए मरे हुए वेणु की एक जांघ को मलना शुरू किया। पर उस जाघ मे से जिस बालक ने जन्म लिया वह बहुत भयानक शक्ल का था, उसको राज्य नही सौंपा जा सकता था। इसलिए ऋषियो ने फिर मरे हुए राजा की दाई जाघ को मलना शुरू किया। इस दाई जाघ मे से एक प्रकाश से चमकते बालक ने जन्म लिया, वही बालक पृथु था···

इन्सान की एक जाघ में यदि भयानकता वास करती है तो दूसरी जाघ मे अनन्त सौन्दर्य। खून के एक ही चक्कर में वर भी, शाप भी···

सुन्दरा कहीं नही, पर है···

सत्रह

मन्दिर के पास वाले जगल के पिछवाडे वाली खड्ड आज धुध से नाको-नाक भरी हुई है। धुध इतनी गाढी और जमी हुई लगती है, लगता है—अगर मैं उसपर पैर रखकर चलू, तो अडोल खड्ड के परली तरफ पहुंच सकता हूं।

पेडो की काली, नीली और हरी परछाइया खड्ड की धुध पर बडी स्थिरता से लेटी हुई है। सिर्फ किसी-किसी वक्त हिलती और करवट

लेती सी लगती है।

पिछले दिना एक यात्री यहा आया था। पता नही कौन था, सिर्फ एक रात का बसेरा करके आगे कुल्लू की पहाडियों की तरफ चला गया। कहता था फिर वापसी पर आऊगा। अभी आया नहीं, पर आएगा, क्योंकि भार हल्का करने के लिए किताबो का एक गट्ठर अमानत छोड गया है।

सिर्फ वही नही अपनी याद भी छोड गया है आज बार बार उसकी याद आ रही है।

जिस दिन आया था उस दिन दूर पास कहीं धुध नही थी पर जब मैंने उसे पूछा कि वह किस शहर से आया था तो उसने हसकर कहा था, धुध वाले शहर से।

पूछा था कि वह शहर कहा है तो हस पडा था, 'हर शहर धुध वाला शहर है,' और उसने जरा ठहरकर कहा था 'हमारी दुनिया मे वह कौन सा शहर है जो धुध वाला शहर नहीं।'

मैंने चारा तरफ देखा था और दूर धौलाधार की पहाडिया की तरफ भी। वह मेरे प्रश्न को समझकर हस पडा था और उसने कहा था — पत्थर हर जगह दिखते है पर इस धुध मे इसान को इसान का मुह नहीं दिखता।

मैंने एक बार उसकी तरफ देखा था। फिर अपनी तरफ। जैसे पूछ रहा होऊ—'क्या तुझे मेरा मुह नहीं दिखता ?

वह कुछ देर चुप रहा था, फिर धीरे से उसने कहा था—'जो मैं यह कहू कि मुझे तेरा मुह नही दिखता, सिर्फ तेरा जोगिया वेश दिखता है फिर ?

मुझे यह लालच नहीं था कि मेरा मुह उसे दिखे, और इस मुह के पीछे 'मैं' हू वह भी उसको नजर आऊ इसलिए मैंने भी हसकर कह

दिया, "चलो, मुह की पहचान न सही, जोगिये वेश की ही सही, क्या यह पहचान के लिए काफी नही है ?"

"जिस हिसाव से दुनिया चल रही है, उस हिसाव से काफी, है" उसने कहा था, और वरामदे के एक कोने में कम्वल विछाकर चुपचाप लेट गया था।

शाम का हल्का-सा अधेरा था, देख सकता था कि अभी वह सोया नही था। उसके हाथ के पास एक दीया, और पानी का कटोरा रखकर, एक वार गौर से उसके मुह की तरफ देखा था। मुह के वारे में कुछ और नही सोच रहा था, सिर्फ यह कि आज तक के देखे हुए चेहरो में वह कुछ अलग-सा लग रहा था, और उसे कुछ घडियो के लिए मै अपने ध्यान में रखना चाहता था—जैसे कोई विलक्षण फूल तोडकर कुछ घडियो के लिए उसे अपने सिरहाने के पास रख ले।

पीठ मोडने लगा था, जिस वक्त उसने कहा था, "जोगिये वेश वाली वात का गुस्सा मत करना दोस्त।"

हसी आ गई थी, इसलिए जवाव दिया था, "जोगिये वेश को तो गुस्सा शोभा नही देता," पर साथ ही ध्यान आया था कि वह ऋषियो की जवान ही होती थी, जो वात-वात मे क्रोधित हो उठती थी और शाप दे देती थी।

इसलिए एक गहरा सास लेकर यह भी कह दिया, "क्रोध करेगा तो जोगिया वेश क्रोध करेगा, मैं क्यो करूगा ?"

वह कधो पर तानी हुई गर्म चादर को, हाथ से परे करके, कम्वल पर वैठ गया, और कहने लगा—"यह वात तूने वढिया कही है। खुश होते है तो वेश ही खुश होते है, क्रोध करते है तो वेश ही क्रोध करते है, इन्सान है ही कहा ? अगर कही है भी, तो मुझे तो धुध मे दिखते नही..."

फिर वह खिलखिलाकर हस पड़ा और कहने लगा—"सारी दुनिया

लती सी लगती हैं ।

पिछले दिनो एक यात्री यहा आया था । पता नही कौन था, सिफ एक रात का बसेरा करके आगे कुल्लू की पहाडियों की तरफ चला गया । कहता था फिर वापसी पर आऊगा । अभी आया नहीं पर आएगा, क्योंकि भार हल्का करने के लिए किताबो का एक गट्ठर अमानत छोड गया है ।

सिफ वही नही अपनी याद भी छोड गया है, आज बार बार उसकी या॰ आ रही है ।

जिस दिन आया था, उस दिन दूर-पास कहीं धुध नही था पर जब मैंने उसे पूछा कि वह किस शहर से आया था, तो उसने हसकर कहा था, 'धुध वाले शहर स ।

पूछा था कि वह शहर कहा है तो हस पडा था "हर शहर धुध वाला शहर है' और उसने जरा ठहरकर कहा था, "हमारी दुनिया म वह कौन सा शहर है जो धुध वाला शहर नहीं ।'

मैंने चारा तरफ देखा था और दूर धौलाधार की पहाडिया की तरफ भी । वह मरे प्रश्न को समझकर हस पडा था और उसने कहा था — पत्थर हर जगह स्थित हैं पर इस धुध म इसान को इसान का मुह नहीं दिखता ।

मैंने एक बार उसकी तरफ देखा था । फिर अपनी तरफ । जसे पूछ रहा होऊ—क्या तुझे मेरा मुह नहीं दिखता ?

वह कुछ दर चुप रहा था फिर धीरे स उसन कहा था—'जो मैं यह कहू कि मुझे तेरा मुह नहीं दिखता, सिफ तेरा जोगिया वेश दिखता है फिर ?

मुझे यह लालच नहीं था कि मेरा मुह उस दिखे और इस मुह के पीछे 'मैं हू वह भी उसको नजर आऊ, इसलिए मैंने भी हसकर कह

या,-"चलो, मुह की पहचान न सही, जोगिये वेश की ही सही, क्या यह हचान के लिए काफी नही है ?"

"जिस हिसाब से दुनिया चल रही है, उस हिसाब से काफी, है" उसने हा था, और बरामदे के एक कोने में कम्बल बिछाकर चुपचाप लेट या था।

शाम का हल्का-सा अधेरा था, देख सकता था कि अभी वह सोया ही था। उसके हाथ के पास एक दीया, और पानी का कटोरा रखकर, एक बार गौर से उसके मुह की तरफ देखा था। मुह के बारे में कुछ और ही सोच रहा था, सिर्फ यह कि आज तक के देखे हुए चेहरो मे वह कुछ अलग-सा लग रहा था, और उसे कुछ घडियो के लिए मै अपने ध्यान में रखना चाहता था—जैसे कोई विलक्षण फूल तोडकर कुछ घडियो के लिए उसे अपने सिरहाने के पास रख ले।

पीठ मोडने लगा था, जिस वक्त उसने कहा था, "जोगिये वेश वाली बात का गुस्सा मत करना दोस्त।"

हसी आ गई थी, इसलिए जवाब दिया था, "जोगिये वेश को तो गुस्सा शोभा नही देता," पर साथ ही ध्यान आया था कि वह ऋषियो की जबान ही होती थी, जो बात-बात मे क्रोधित हो उठती थी और शाप दे देती थी।

इसलिए एक गहरा सास लेकर यह भी कह दिया, "क्रोध करेगा तो जोगिया वेश क्रोध करेगा, मैं क्यो करूगा ?"

वह कधो पर तानी हुई गर्म चादर को, हाथ से परे करके, कम्बल पर बैठ गया, और कहने लगा—"यह बात तूने बढिया कही है। खुश होते है तो वेश ही खुश होते है, क्रोध करते है तो वेश ही क्रोध करते है, इन्सान है ही कहा ? अगर कही है भी, तो मुझे तो घुध मे दिखते नही…"

फिर वह खिलखिलाकर हंस पडा और कहने लगा—"सारी दुनिया

कपड़ा में बटी हुई है, वेशा में—फटे हुए चीथड़ा वाले, काम-काजी मजदूर, अधमैले कपड़ों वाले, छोटे छोटे दुकानदार, चमकते कपड़ों वाले बड़े-बड़े दुनियादार " और मेरा हाथ पकड़कर मुझे भी अपने कम्बल पर बिठाते हुए कहने लगा, 'और किमखाब पहनने वाले राजा और मन्त्री, इस लोक के रक्षक और गेरुए वेशो वाले परलोक के रक्षक।'

मेरे कंधे पर उसने जोर से एक हाथ मारा, और फिर कहा "और ता और, धरती के टुकड़े भी वेशा से ही पहचाने जाते हैं—अपने अपने झण्डा से। और उन धरती के टुकड़ा की रखवाली भी इन्सान नही करते, वर्दियाँ करती हैं अगर इन्सान कही होते, तो लड़ाइयों की क्या जरूरत थी भला कहीं सचमुच का इन्सान भी सचमुच के इन्सान को मार सकता है? यह सब वर्दियो और वेशा की लड़ाई है झण्डो की लड़ाई

" उस एक सास सी चढ़ गई थी। जसे सांस बहुत बड़ी थी और छाती बहुत छोटी थी। और लग रहा था—कपड़ो का वेश तो क्या, उसकी रूह को उसके बदन का वेश भी तग लग रहा था

"तू कोई भगवान् को पहुचा हुआ इन्सान लगता है," मैंने उसकी पीठ पर अपनी सी मारी थी, और उसके कधा से उतरी हुई चादर उसके कधो पर ओढ़ा दी थी।

वह हसा नही, बल्कि कुछ उदासीन-सा हो गया। और कहने लगा, 'भगवान् के पास तो किसी फुरसत के वक्त पहुच लगे। पहले अपने आपके पास पहुच लें इस युग म भगवान् तो क्या दिखना है अभी किसी को अपना मुह भी नही दिखता

कुछ कहने के लिए मचल-सा गया था। मैं नही, शायद मेरा गेरुआ वेश मचल गया था। पर अपने वेश को मैंने स्वय ही चुप सा करवाया, और वहा से उठ बैठा।

सुबह मक्की की रोटी और गुड की डली, मैंने जब उसको जाते हुए

उसके पल्ले से बाध दी, उसने अपनी गठरी-पोटली को ज़रा हाथ से तोला, और फिर कुछ किताबो का भार उससे हल्का करके, गठरी और पोटली उठा ली।

"यह मेरी अमानत। फिर जब इस राह से गुज़रूगा, ले लूगा," उसने कहा था।

"पर जो कुछ छाती मे डाला हुआ है और मस्तक मे भी, वह भी तो बहुत भारी है," मुझे हसी-सी आ गई थी।

"उसे ढोने के लिए ही तो इस शरीर की ज़रूरत है, नही तो यह शरीर क्यो सभाले फिरना था।" वहां हस पडा था।

बहुत-से यात्री आते है, जाते हैं। पर जो भी आते हैं, मन्दिर की नदी मे से पानी के चुल्लू भरते, जैसे नदी को कुछ रीता ही करते है। पर वह जब हंसा था, मुझे लगा—उसकी झरने जैसी हसी नदी के पानी मे मिलकर, नदी को और भर गई थी।

कहा कुछ नही, सिर्फ जाते समय यह पूछा—"इन पुस्तको को बाचने का हक वर्जित तो नही ?"

उसके, जाते हुए के, पाव पलभर को ठहर गए थे। उसने गौर से मेरे मुह की तरफ देखा था—जैसे किसी धुध तह की में से मेरे मुह को ढूढ रहा हो।

"ज्ञान को धारण करना, शिव जी की तरह गगा को धारण करने के बराबर है," उसने कहा और मुस्करा दिया।

"पुराणो मे गगा के बारे मे जो भी प्रसग आते हैं, उनकी जगह, जो तेरा यह कथन प्रसंग बनकर आता तो बहुत अच्छा था।" अनायास ही मेरे मुह से निकला।

"पुराणो मे क्या प्रसंग आते हैं ?" उसने पूछा।

"कई आते है," मैंने जवाब दिया, "जिनमें से एक यह है कि यह

वामन-अवतार में पैरों का जल है। जब वामन का पर ब्रह्म लोक तक पहुचा, तब ब्रह्मा ने उसका पर धोकर उस जल को कमडल मे डाल लिया, और भगीरथ की प्रार्थना पर ब्रह्म लोक से छोड दिया। शिव जी ने उस जल को जटाओ म सभाल लिया और फिर जटा खोलकर उस जल को पृथ्वी पर छोडा तो वही जल 'गगा' कहलाया।

"और ?' उसने फिर पूछा।

और वाल्मीकीय रामायण मे आता है कि हिमालय पर्वत के घर मेनका के उदर से गगा और उमा दो बहनें पैदा हुइ। एक बार शिव ने अपना वीर्य गगा मे डाल दिया। गगा उसे धारण न कर सकी, और गर्भ को फेंककर ब्रह्मा के कमण्डल मे जा रही। फिर भगीरथ की प्रार्थना पर कमण्डल मे से निकलकर पृथ्वी पर आई

"काफी दिलचस्प कहानियां हैं। वह ज़ोर स हसा, और कहने लगा 'शायद इन कहानियों मे ही गगा को पाप का चिह्न कहा गया है "

'गगा को कि शिव जी के वीर्य को, जिस गगा धारण न कर सकी ? किसी ज्ञान को गर्भ मे धारण कर सकना ही तो मुश्किल था

मैंने जब कहा तो हम दोनो इस तरह हसे, जसे हम दोनो स्पष्टता और अस्पष्टता के बीच म खडे बडे खाए हुए लग रहे थे।

यह बात अलग है कि दूसरे पल वह चला गया और मैं उसके जाने के बाद भी कितनी ही देर तक वहां खडा रहा।

उस दिन धुध नही थी, पर आज मन्दिर के पास वाले जगल के पिछवाडे वाली सडक में धुध भरी हुई है

वसे जिस धुध की बात उसने की थी, वह उस दिन भी थी आज भी है और शायद हमेशा होगी

सिर्फ यह कह सकता हू कि आज धुध दोहरी है

पर यह दोहरी धुंध पता नही कैसी है—गाढ़ी, सफेद, और वर्फ की तरह जमी हुई—कि पेड़ो की काली, नीली और हरी परछाइयो की तरह। किसी के यहा होने की परछाईं भी इस पर अडोल पड़ी लगती है…

यह पता नही मेरे वजूद की परछाईं है, कि उस यात्री के रूप मे किसी ज्ञान के वजूद की परछाईं…

अठारह

आज लगता है—उस यात्री को मैंने वहुत नजदीक से देखा है। उसे भी और अपने को भी।

उसकी अमानत किताबो मे से एक किताव मैंने पढी, किताव का हर पन्ना जैसे शीशे का एक टुकड़ा था। प्रयत्क्ष अपनी सूरत. भी नज़र आती रही, और अपनी कल्पना में पड़ी हुई उस यात्री की सूरत भी।

आम शीशे में और किसी रचना के शीशे में शायद यही अतर होता है…

किताव वाली कहानी का पात्र जापान का कोई स्कूल मास्टर है, एक दिन अगस्त के महीने मे वह अलोप हो जाता है, सवको यही पता है कि वह समुद्र के किनारे छुट्टियां मनाने गया है। उस शहर से समुद्र का किनारा सिर्फ आधे दिन के सफर के फासले पर है। और फ़िर उसकी कोई खवर नही मिलती। अखवार के द्वारा भी उसकी पडताल होती है, और पुलिस द्वारा भी, पर कोई सुराग नही मिलता।

लोगो का सवसे पहला ख्याल जिस वात पर जाता है, उस वात का सिरा सिर्फ औरत से जुड़ता है। पर उसकी वीवी लोगों को यकीन

दिलाती है कि लोगो की कल्पना की औरत कहीं कोई नहीं। इसलिए वह सिरा उस कल्पना स भी खुल जाता है, और सिफ हवा म लटकता रह जाता है।

इतना-सा सबको पता है कि वह जब समुद्र के सफर के लिए घर से निकला था उसके हाथ में एक खाली बोतल थी, और एक छोटा-सा जाल। कीडो की नई किस्मे ढूढने मे उस आदमी की दिलचस्पी थी। इसलिए एक खाली बोतल और एक छोटा-सा जाल ही उसके हथियार हो सकत थ।

और फिर जब गुमशुदा आदमी को खोए हुए सात बरस गुजर जाते हैं तो सिविल कोड के सेक्शन तीस के मुताबिक उसे मर चुका कह दिया जाता है।

पर मौत क जाने पहचाने अर्थों से अलग भी मौत के अथ होत हैं वह समुद्र के पास एक गाव म पहुचकर जब गाव की खत्म होता सीमा से आगे बढता है—धरती उसे सफेद सी और बिल्कुल सूखी-सी नजर आती है। वही वीरानगी फिर रेतीली जमीन बन जाती है। पर रेत म समुद्र की गध मिली होती है इसलिए वह माथे का पसीना पोंछकर चलता जाता है। फिर एक बहुत ही अकेला-सा गाव उसे दिखता है—आलुओ का कुछ खेती हुई भी दिखती है पर सफेद रेत का प्रसार फिर भी खत्म नही होता लगता। और एक अजीब बात यह कि रेत की सडक कदम-बकदम ऊची होती जाती है—हालाकि समुद्र की तरफ जाती सडक कदम-बकदम नीची होती जानी चाहिए थी। वह एक बार जेब म डाला हुआ नक्शा खालकर देखता है राह जाती हुई एक लडकी को कुछ पूछना है, पर जवाब नहा मिलता। किसी किसी जगह सीपियो के ढेर और मछलिया पकडने के जाल दिखते हैं, वह उनसे भी एक तसल्ली-सी ढूढता है, और चला जाता है। और फिर एक और अजीब

बात कि सडक के आसपास वने घर सड़क से ऊंचे होने चाहिए थे, पर वह दोनो तरफ सड़क से नीचे है—रेत के अम्बारो मे डूबे हुए। और फिर अचानक आती एक उतराई के वाद उसे झागो-झाग समुद्र दिखाई देने लगता है। यहा रेतो के टिब्बो पर ही उसे गैर मामूली कीड़े ढूढने थे।

गेत का हिलता प्रसार उसे वड़ा दिलचस्प लगता है—सरकता, रेंगता, जैसे वह कोई जीती-जागती और वेचैन रूह हो।

रेत उसके पैरो के नीचे भी हिलती है, और उसके पैर चौंककर रेत के कानून की ओर देखते है···

कुछ बूढे आदमी कुछ घवराए हुए-से उसे सरकारी आदमी समझते है, पर वह विश्वास दिलाता है, कि वह एक साधारण स्कूल मास्टर है। रात विताने के लिए वह कोई जगह पूछता है तो एक जना उसे मदद का विश्वास दिलाता है। शाम ढल जाती है। उसे कीड़ो की कोई खास किस्म नही मिलती, और वह थककर अपनी तलाश कल पर छोड़ देता है।

रात विताने के नाम पर उसे सड़क पर से उतरती एक गहरी खाई मे वना हुआ एक घर मिलता है। रस्सी की मदद से वह घर की छत पर उतरता है। घर का रास्ता दिखाने आया हुआ बूढा लौट जाता है। वह घर की छत पर ढेर सारी गिरती रेत को देखकर परेशान होता है, पर यह तजरुवा सिर्फ एक रात का सोचकर वह धीरज वाध लेता है।

रस्सी को घर की छत तक लटकाते समय बूढे ने आवाज़ दी थी—'नानी, किवाड़ खोलो।' पर यह यात्री घर की दहलीज़ पर जिस औरत को देखता है, उसकी जवानी अभी ढली नही होती। हाथ मे लालटेन पकडे वह उसका स्वागत करती है।

"इस कोठरी मे एक ही लालटेन है, अगर तू अवेरे मे वैठ सके, तो

में पिछवाड़े बैठकर तेरे लिए कुछ राँध लूँ," औरत कहती है।

"मैं कुछ खाने से पहले नहाना चाहता हूँ," वह जवाब देता है।

औरत हैरान सी होती है, फिर कहती है—"जो तू परसों तक इन्तज़ार कर सके, नहाने का इन्तज़ाम हो जाएगा।"

"पर मैंने यहाँ सिर्फ़ एक रात रहना है," वह जवाब देता है और हैरान होता है कि औरत ने उसकी बात सुनी अनसुनी कर दी है।

खाने के लिए उसे मछली का सूप मिलता है, पर औरत जब उसकी थाली पर कागज़ की छतरी तानती है, वह हैरान होता है, तो वह बताती है कि यहाँ रेत इस तरह उड़ती है कि अभी सूप का प्याला छतरी के बिना रेत के कणों से भर जाएगा। और वह बताती है कि हवा का रुख जो इस बार हो, तो सारी रात उस छत पर से रेत उखेरनी पड़ती है, नहीं तो दूसरे दिन तक सारी कोठरी रेत में दब जा सकती है।

उसका बदन थोड़ी देर में चिरचिरा हो जाता है, और उड़ती रेत उसके गले में, नाक में और आँखों में एक तह की तरह जमने लगती है।

दूसरे दिन सवेरे-सवेरे बाहर दूर से बहुत ऊँचाई से आवाज़ आती है, और रस्सी से एक आदमी के लिए नहीं, दो आदमियों के लिए कुछ खाने का सामान नीचे उतार दिया जाता है। घबराहट-सी एक उसकी आँखों के आगे रेत के कणों की तरह घूमती है, पर उसकी समझ में कुछ नहीं पड़ता। औरत लगातार एक फावड़े से दरवाज़े के सामने से रेत को हटाने में लगी हुई है।

"मैं तेरा हाथ बटाऊँ?" वह औरत से पूछता है।

पर औरत जवाब देती है, "पहले दिन ही तुझे इतना तकलीफ़ दूँ? नहीं, पहले दिन नहीं।" वह परेशान होता है, फिर भी उसके हाथ से फावड़ा पकड़कर उसकी मदद करना चाहता है। औरत कहती है—

"अच्छा, जो तुझे आज ही काम पर लगना है तो तेरे हिस्से का फावड़ा उन्होंने भेज दिया है, वह ले ले।"

"वह कौन ?" अजीब परेशानी है। वह वहा से उल्टे पाव ही चला जाना चाहता है, पर बाहर की सड़क तक पहुचने के लिए रेत की चढाई किसी तरह भी पार नही की जा सकती···

वह रेत का कैदी होकर रह जाता है···

गाव के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सारी रात रेत को बुहारने का काम ज़रूरी है, और इस काम के मज़दूर सिर्फ रेत बुहारते हैं। और उसके बदले गाव के मुखिया उन्हे सूखी हुई मछली, कुछ आटा और कुछ पानी रस्सियो से उतारकर, उन तक पहुचा देते हैं··

"इसका मतलब है कि तुम कुछ लोग सिर्फ रेत बुहारने के लिए जीते हो ?" वह परेशान होकर पूछता है।

"हा, सिर्फ रेत बुहारने के लिए। यह गाव तभी बना रह सकता है। जो हम यह काम छोड दे तो दस दिनो मे सारा गाव रेत के नीचे दब जाएगा···" औरत बताती है, और उसका दार्शनिक मन सोचता है कि रेत के इस कानून के आगे शायद कुछ भी नही हो सकता। बड़ी-बड़ी बादशाहते भी वक्त की रेत मे दब जाती है···पर अस्तित्व क्या है ? शायद पानी के अथाह सागर मे पानी को बुहार-बुहारकर एक निश्चल स्थान बनाने का यत्न···

उसकी निराशा उसके गले मे अटक जाती है, वह रेत की दीवार पर चढकर रेत की इस कबर मे से निकल जाना चाहता है पर···

इस 'पर' का जवाब कही नही···

"उन्होने मुझे, यहा, तेरे पास, रेत का कैदी क्यो बनाया ?" वह हारकर कुछ दिनो बाद उस औरत से पूछता है।

"इसलिए कि मैं अकेली थी, यहां मुझे रेत भी खा जाती, और

कर, या दूध और मधु के रग से मिलाकर

रगो का भी शायद शौक होता है भुलावा डालने का। जो सिर्फ किसी रग की उपमा मे किसी को विरह लिखना हो तो मेरा ख्याल है वह सबसे पहले सप फली की उपमा मे कोई विरह लिखेगा। उसके जितना सुन्दर रग किसी फली का नही होता। उसके रग मे जैसे आग जलती होती है। पर इसी सप फली का दूसरा नाम मौत फली है। इसको बस होठो से छुआने की देर होती है

आम मिट्टी मे से उगने वाली जडी-बूटियो का जहर सिर्फ होठो को चढ़ता है, पर इसान के मन मे से उगने वाली जडी-बूटियो का जहर आखो को भी चढता है माथे को भी चढ़ता है सासों को भी चढता है, ख्यालो को भी चढ़ता है और सपनो को भी चढता है

कभी कभी नदी की आवाज मे से अचानक महत किरपासागर जी की आवाज उभर आती है—कसूर मेरे कानो का है आवाज का नही—पर फिर भी ऐसे लगता है जैसे वह आवाज मेरे कानो से मजाक-सा करती हो

बस सोचना चाहता हू कि मेरे कान उस आवाज से मजाक करते हैं। पर पता है, यह सच नही। शायद कभी हो जाए पर अभी नही। अभी तक यही सच है कि यह आवाज

यह सब कुछ शायद इसलिए कि उनकी आवाज मे कुछ खास तरह का कुछ' था—नदी के पानी का तरह हल्का सा होता भी बडा भारी, और अपने जोर से बहता। काई पत्थर ककड पत्ता या हाथो का मल उसमे फेंक मा द तो उसस बेपरवाह उसको बहाकर ले जाता, या परो मे फेंककर उसके ऊपर गुजर जाता।

पानी के बहाव की शायद सिर्फ आखें होती हैं, कान नही होते। उनकी आवाज भी एक सीध मे चली जाती थी, इर्द गिर्द की बातों को

सुनकर कभी खड़ी नही होती लगती थी। साधु डेरे भी, घर-गृहस्थी की तरह, झगडो-वगड़ो और निन्दा-चुगली से वसते हैं—जाले इनकी दीवारों पर भी लगते हैं। पर महंत किरपासागर जी की आवाज़ के वारे मे मैं यह ज़रूर कह सकता हूं कि वह नदी के वेग की तरह, इस सव कुछ को वहाकर ले जाती और उन्हे आखे भरकर देखती भी नही थी।

यह आवाज़ दो तरह की थी—एक भारी और वेगवती, और दूसरी वहुत सूक्ष्म, उदास और पवन की तरह पवन मे मिलती, और अपने अस्तित्व का सवूत भी चुराती।

पहली तरह की आवाज़, एक खास तरह के प्रभाव को लेकर चलती थी, पर दूसरी तरह की—इससे विल्कुल वेपरवाह होकर।

कोई जव भी वात करता है सिर्फ पहली तरह की आवाज़ की ही वात करता है। शायद वह प्रत्यक्ष थी, इसलिए। और शायद लोगो की अपनी हस्ती उसके प्रभाव के नीचे झुक जाती थी, इसलिए। पर मेरे लिए इस तरह नही। सोचता हू—वाहर दिखते वोझ को कोई हाथ से अपने ऊपर से उतार सकता है, पर वह जो दूसरी किस्म का कुछ होता है, जो सासो मे मिलकर छाती मे उतर जाता है, उसका क्या करे।

मन्दिर के साथ वाले जगल मे, यह दूसरी तरह की आवाज़ मैंने कई वार सुनी थी। वह अकेले, रात-प्रभात, कभी उस जगल मे खो गए लगते थे—आवाज़ को भी शायद, जंगल की शा-शां में मिलाकर, खो देना चाहते थे—एक ही वोल होता था, जो वार-वार होठो से झडता था—"मुद्दतें गुज़र गईं वेयार ओ मददगार हुए।"

यह वोल उनके होठो से पीले पत्ते की तरह झडता था, फिर होठों पर हरे पत्ते की तरह उगता था, और फिर होठो से पीले पत्ते की तरह झडता था...

पजो के वल चलकर मैंने कई वार इस आवाज़ का पीछा किया था।

अपने कानों की इस चोरी से मुझे कोई उलाहना नहीं। सिर्फ कई बार ऐसे होता था कि मेरे कान बहुत दर्द करने लगते थे और लगता था कि एक नफरत मेरे कानों में पीप की तरह भर जाती थी।

पता नहीं, यह असली अर्थों में नफरत थी या नहीं। यदि थी तो इससे बचने के लिए मैं बड़ी आसानी से यह कर सकता था कि कभी वह आवाज न सुनता। एक बेपरवाही की रूई कानों में दे सकता था। पर मैं तो उस आवाज का पीछा करता था। वह मुझे बुलाती नहीं थी, पर फिर भी पंजों के बल चलकर मैं उसके पीछे जाता था। उसके बिना कानों को जैसे एक बेचैनी सी होती थी।

आज आवाज कोई नहीं पर उसकी कल्पना अभी भी बाकी है। वही उस मरी हुई आवाज को फिर से जीवित कर देती है। और फिर वह सिर्फ मेरे कानों तक सीमित नहीं रहती। कई बार मेरे होठों तक भी आ जाती है। होठ उसके भार के तले हिलने लग पड़ते हैं और हिलते हिलते खुद एक आवाज सी बन जाते हैं—मुद्दतें गुजर गई बयार श्री मन्नगार हुए

किसी साइ फकीर ने कहा है—

> कुन फिकुन जदां कीतो ई
> कीतियां नी जारावरियां
> जुज अपनी तों जुदा कीतो ई
> तेरियां कीतियां सब्ब परियां[1]

---

[1] तुमने जब कहा कि मैं एक से अनेक हो जाऊं तब तुमने हमसे जबरदस्ती की। तुमने हमें अपने से अलग कर दिया और तुम्हारा किया हमें स्वीकार करना पड़ा।

उस साईं-फकीर ने भी शायद यही एकाकीपन भोगा था, जो महत किरपासागर जी ने बेयार मददगार होते हुए भुगता था···

कुन-फिकुन—मैं एक से अनेक होऊ—

पता नही किस अपार शक्ति को यह ख्याल आया ? सब छोटे-छोटे टुकडो में बंट गए थे—एकाकीपन के टुकडो मे ।

महत किरपासागर जी का अस्तित्व भी एकाकीपन का एक टुकड़ा था—और उस टुकडे ने शायद बिल्कुल मिट जाने के खौफ मे से एक और टुकडे को जन्म देना चाहा था—मुझे ।

किसी के वजूद पर लादी गई किसी की मरजी···
मुझे उनसे नही, उनकी इसी मरजी से नफरत है···

अपना आप नाजायज़ लगता है, शायद इसलिए यह नफरत जायज़ लगती है···

बीस

आज वह आया था—वही दीनानाथ। कपड़े साधारण थे, घर के धुले हुए थे, साफ-सुथरे, पर उसके सिमटे हुए अगो से लगकर कुछ सिकुड़े-से लग रहे थे, उसके मुह की तरह दीन-से लग रहे थे, और उसके मुख से निकली बात की तरह झिझकते-से, और गुच्छा-से होते···

उसके गले में कोई अगोछा-सा था और उस अगोछे की कन्नी वह अपने हाथ से ऐसे मरोड़ रहा था, जैसे अभी भी एक कपड़े के टुकडे से लालटेन की चिमनी पोछ रहा हो···

पता नही उस दिन उसको चिमनी पोछते हुए देखकर उसका किस तरह का मुह ध्यान म श्रड गया था। लगा वह कई बरसा से एक चिमनी का पोछ रहा है

वह बडे एकान्त के समय श्राया था। यह शायद सयोग नही था, वह वक्त को देखकर श्राया था। मैं उस वक्त श्रकेला मन्दिर के पिछवाडे वाले जगल म पगडडिया पर घूम रहा था। राज शाम का सन्ध्या के समय इस तरह घूमता ह। एक नियम की तरह। लगता है उसको इस नियम का पता था

ये चत के दिन बड श्रजीब होते है—पेडा की पत्तिया पल पल म रग बदलती है, थोडी सी हवा से भी काप काप सी जाती हैं श्रौर फिर लगता है जसे वे घबराकर पेडों के परा पर गिर रही हो

उनकी यह दीनता देखकर मन मे कुछ होता है

वह भी जब श्राया मेर पास मेरे मन को कुछ हुश्रा

मरा ख्याल है उसने भी एक बार चुपचाप पेडो की तरफ देखा था—पेड जो हर घडी नगे श्रौर दीन-से हो रहे थे फिर उसन, श्राखा का भुकाकर पडा की होनी कबूल कर ली थी —

'मैं तुमसे एक बात करने श्राया हू ' उसने कहा। पर इतना वह मुझ कहता नही लग रहा था, जितना श्रपने श्रापको। जैसे कोइ पेड श्रपने को पतझड के श्राने की खबर बता रहा हो।

'वह तेरी मा है ' उसन कहा, श्रौर फिर चुप हो गया।

पता नही यह बताने वाली क्या बात थी। मुझे पता थी, श्रौर उसको भी मालूम था कि मुझे पता है।

"जाने उसके कितने दिन रहते हैं, पता नहीं दो घडिया ही हो, पर उसकी जान श्रटकी हुई है तूने उस राजकुमारी की कहानी सुनी है जिसकी जान तोते म थी ? वह मारने से नही मरती थी पर जब किसी

ने तोते की गर्दन मरोड दी, उसकी भी गर्दन टूट गई वह भी अभी मरने लायक नही थी, पर उसकी जान उसमें नही, तुझमें है। तेरी एक नजर में। तू नजर मोड़ता है, उसकी जान लटक जाती है···तू उसे एक बार मा समझकर देख, वह मरी हुई भी जी पडेगी· " यह सब कुछ उसने अटक-अटककर भी कहा और एक सास मे भी।

मुझे ऐसा लगा था कि जैसे वह मुझ पर तरस खाकर मुझे गुफा के अधेरे मे से निकालने आया हो, पर उसे यह पता न हो कि अगर उसने दो कदम आगे रखे, तो उसे भी हमेशा के लिए गुफा के अधेरे मे गुम हो जाना होगा।

मुझे जिन्दगी मे अगर किसी पर पहली बार तरस आगा: तो उस पर—दिल मे आया कि उसके होंठो पर हथेली रखकर उसे आगे कुछ कहने से चुप कर दू···

हवा तेज नही थी, पर पेडो की पत्तियां झडी जा रही थी। मै हवा को हाथ से रोक नही सकता था।

"वह बडी नेक औरत है···" शब्द उसके मुह में थे, मेरे कान बौरा-से गए। वही घडी सामने आ गई, जब महत किरपासागर जी ने आखिरी स्वासो के समय कहा था, "वह एक पुण्यात्मा है···"

लगा—यह दोनो मर्द, मुझे—एक तीसरे इन्सान को—यह बताने के बजाय, एक दूसरे को बताते, फिर ?

तो क्या फिर भी दोनो के मुह से यह बात निकलती ? सोचा—महत किरपासागर जी जीवित नही, पर उनकी कही हुई बात बाकी है, जो मै यह इस भोले इन्सान को सुना दू ? लगा—यह जो स्वय ही गुफा के अधेरे मे भटकने के लिए आया है, तो मै क्या कर सकता हू·

इसलिए जवाब दिया—"मुझे पता है, महत किरपासागर जी ने भी यही बात कही थी।"

बहुत दिन हुए, महाभारत की एक कथा पढ़ी थी कि एक मुनि ने यज्ञ कराया राजा की ओर से इक्कीस बैल दक्षिणा म मिले, पर मुनि ने वे बैल दूसरे ऋषियों को दान कर दिए और राजा से और बैल मांगे। राजा ने गुस्से म आकर मरी हुई गायें दे दी। मुनि ने भी गुस्से मे आकर राजा के नाश के लिए और यज्ञ आरम्भ किया। वह ज्यो-ज्यो गउओ का मांस काटकर हवन करता गया त्यो-त्यो राजा का राज्य नष्ट होता गया

लगा—मैंने जो बात कही थी, वह भी एक मरी हुई गाय का मांस काटकर हवन म डालने वाली बात थी और उसके साथ अभी इस सामने खड़े इ सान के मन का स्वग नष्ट हो जाएगा

मा उस वक्त मरी हुई गाय की तरह लग रही थी

पर कोई भी स्वग शायद भुलावे के पर्दे म नहीं होता सच की नग्नता म होता है। लगा मैं कुछ भी कहू, उसके मन क स्वग को नष्ट नही कर सकता था। क्योकि मेरी बात के जवाब मे उसने स्वय ही कह दिया था उ होने जरूर कहा होगा क्योकि यह सच है।'

एक बार यकीन नहीं आया कि मैं सचमुच उसक स्वग को नष्ट नही कर सकना। इसलिए फिर कुछ ठहरकर कुछ और स्पष्ट-सा कहा—

'उन्होने यह भी बताया था कि उस पुण्यात्मा को भगवान् ने स्वय सपने म दशन दिए और हुक्म दिया '

लगा मैंने उसक स्वग का अगर अभी नष्ट नहीं किया था, तो भी एक सेंघ जरूर लगा दी थी। और मैंने कहा 'भगवान् एसा हुक्म दन क लिए सिफ किसी पुण्यात्मा को ही चुन सकता है '

ख्याल था—वह चौंककर पूछेगा—क्या हुक्म ? कसा हुक्म ? पर उसने कुछ नहीं पूछा। सिफ यह लगा कि वह कुछ काला-सा जरूर था। फिर वह कुछ दर सामने पड़ो की तरफ देखता रहा, जिनकी टहनियाँ पतझड़ पत्तों स नगी-सी हो रही थीं।

"हा, उस पुण्यात्मा को ही मैने यह हुक्म देने के लिए चुना था। यह मेरा हुक्म था···उसने हमेशा मुझे भगवान् समझा है···" उसने कहा।

लगा—यह कहते हुए न उसका मुह दीन-सा हो रहा था, और न उसकी आवाज हीन-सी थी।

याद आया—पाच-छ दिन पहले, जब उसके घर गया था, उसने भी कुछ ऐसा ही कहा था—"मेरे ऐसे करम कभी नही हुए कि भगवान् मुझे सपने मे दर्शन देते, और कुछ कहते, मैंने सिर्फ उसका हुक्म माना जिसे मैंने सारी उम्र भगवान् समझा। दर्शन उसे हुए थे, मैंने सिर्फ हुक्म माना···"

लगा एक सास था जो मेरा छाती की हड्डियो मे अटक गया था· ·

"वह ऐसी नेक औरत है, कि मै अगर उसे सीधा-सादा हुक्म देता, वह रोती, और मेरे पैरो पर गिर पडती कि मै इस हुक्म को वापस ले लू। मै उसका भगवान् था, पर जो भगवान् सामने दिखता हो, उसको यह भी तो कहा जा सकता है कि हुक्म को वापस ले ले···इसलिए मैंने अपना हुक्म उसको उस भगवान् के मुह से सुनवाया, जो दिखता नही। कहा कि मुझे सपने मे भगवान् के दर्शन हुए है और उन्होने हुक्म दिया है कि तेरा सजोग·· "

लगा—एक अनन्त पीडा उस आदमी की छाती मे उठी थी। उसने पेड के एक तने से पीठ लगा ली, और पलभर के लिए अपनी आखे, आखो की पलको के नीचे ढाप ली।

फिर उसकी आखो की पलके धीरे से हिली, उसके होठो की तरह। और उसने कहा—"तुझे शिव की मूर्ति के आगे चढाकर जब महत किरपा-सागर जी ने कहा था कि यह बालक आज से शिव जी का पुत्र है, उन्होने सच कहा था। क्या हुआ जो तन उनका था, तेरी मा ने जब उनके तन से पुत्र मागा था, तो उन्होने अपने तन मे शिव का मन डालकर उसे पुत्र

दिया था ”

और लगा—अब उसके मुह पर आया हुआ अनन्त दद उसका बन बन गया था। उसने पेड के तन से लगी हुई पीठ पेड से हटा ली और एक पेड की तरह तनकर खडा हो गया। और सिर पेड पर नय सिरे मे लगे पत्तों की तरह मुस्करा दिया, वह मन भरा था। मैं आप शिव हू। मैंने शिव की तरह जहर का प्याला पिया है ’

उसने सचमुच जहर का प्याला पिया है यह सामन दिख रहा था। मैंने आखें नीची कर ली।

“तू सोचता होगा कि तू मेरा पुत्र नही। पर मैं ऐसे नही सोचता। हिसाब सिफ लोक का नही होता, परलोक का भी होता है। असली सयोग तन का नहीं होता मन का होता है। तन साथ नही देता था, इसलिए तन की जगह मैंने मन का बरत लिया। उसका तन मेरा मन और तू इस सयोग में से पदा हुआ। मैं किस तरह कहू कि तू मेरा पुत्र नहीं ’

लगा—मेरा माथा झुक गया था। वह कह रहा था ”मैंने तेरी मा पर कोई अहसान नही किया था। वह बेचारी अब भी समझती है कि मैं उसे भगवान् का रूप होकर मिला हू। पर यह मेरा पाप है कि मैंने उसे कभी कुछ और नहीं बताया। पता नही, उसकी आखों में भगवान् का रूप होकर रहने का लालच है ’ वह कहता कहता हस सा दिया और फिर कहने लगा— तू उसका बेटा है, इसलिए तुझे अपना बेटा समझकर बताता हू कि मैंने अपनी जवानी म उसके साथ द्रोह किया था। वह अभी डोला म से निकली थी कि मैं उसे छोडकर परदेस चला गया था। धन कमाने के लिए। कमाया भी बड़ा उजाड़ा भी बड़ा। पर धन से ज्यादा मैंने अपने आपका उजाडा। ऐसी बीमारी लगी कि जिसके इलाज के वक्त सयानों ने मुझे बताया कि अब मेरा वश कभी नही चलेगा। बीमारी का खाया हुआ जब घर लौटा, उस नेकबख्त के माथे लगने

लायक नही था। मन फटकारे देता था। पर मैंने उसे बताया कुछ नही। बरस बीत गए। रोज देखता था कि वह एक पुत्र के मुह को तरसती थी। कितनी देर देखता ? उसका कुछ तो कर्ज़ा चुकाना था···जैसे-तैसे उसे तेरा मुह दिखाना था···"

लगा—उसके पाव धरती से ऊचे हो गए थे। इतने ऊचे कि मेरे माथे तक पहुच गए थे··

और शायद उसके पाव चल रहे थे, मुझे लगा, मेरा माथा भी उसके पैरो के साथ-साथ चल रहा था

एक बहुत ही लम्बी राह थी, कुछ नही दिख रहा था। शायद शाम का अधेरा बहुत गाढा हो गया था, कि शायद मै मन्दिर की गुफा मे चल रहा था ·

और फिर एक उजाला-सा हुआ। देखा—उसके हाथ मे एक लालटेन थी। शायद उसने लालटेन अभी जलाई थी···

और देखा—लालटेन की चिमनी पर एक भी दाग नही था। उसने चिमनी के शीशो को पोछ-पोछकर उसके सारे दाग उतार दिए थे ··

और लालटेन की रोशनी में देखा—मेरे सामने मेरी ओर बिटर-बिटर देखता मेरी मा का मुह था ··

मन्दिर के पिछवाडे वाले जगल में से चलता हुआ पता नही किस तरह मैं वहा उसके घर पहुच गया था ·

मेरी बाहे उसके गले की ओर बढी—जैसे कोई बहुत अधियारं गुफा में से निकलने के लिए गुफा का द्वार ढूढता है···

उसके सास मेरे माथे को छू रहे थे कही से बहुत ठडी औ ताज़ी हवा का झोका आया है, और मेरे सासो मे मिल गया है ··

शायद अब सामने, एक कदम की दूरी पर, कैलाश पर्वत है···

इक्कीस

मारे के मारे आसमान ने जमे धरती को अपने हाथो धोया हो

बादल मरे पावा के नीचे कुछ रेशम सा बिछा रहे हैं

अचानक पेडो की टहनियो ने मरे गिर्द कुछ लपेट सा दिया है

अभी माथे पर एक ठडी फुहार सी पडी है, कुछ उडते पक्षी सिर क ऊपर स गुजर है शायद उ होने अपने पखा स कुछ कुहरा झाडा है

एक सरसराहट सी भी शायद उनक पखा से झडकर मरी छाती म पड गई है

सूरज की कुछ किरणे शायद सोई हुई बफ को जगाने क लिए आई हैं।

नदिया का पानी एस ठुमककर चल रहा है जस उसन परा म चादी की खडाऊ पहनी हुई हो

लगता है—कलाश पवत की सारी सुदरता सारी ऊचाई और सारा एकाकीपन मेरा है

एक बडे निमल पानी का सोता मरी मा का मुह जसा है जिसमे मरी परछाइ ऊघ रही है

कमल फूला क तालाब का दखकर अनायास ही महत किरपासागर जी का ख्याल आ गया है

अभी किसी टहनी से एक फूल गिरा था, और अडाल एक हथेली की तरह मेरे पर को छू गया था। एक पल लगा पैर जसे मूर्छित सा हो गया था

दूर वह गुफा दिख रही है जिसके अंधेरे मे मै कई वरस चला हू। मेरा ख्याल है कोई उस अंधेरे मे अब भी लालटेन लेकर खडा है···

मेरा ख्याल है शिव और पार्वती पत्थर नही हुए, सिर्फ वहां, मन्दिर की छत के नीचे, एक जगह खड़े, हाथ के इशारे से वता रहे है कि यह गुफा कैलाश पर्वत पर पहुचती है···

लगता है—कैलाश पर्वत की सारी सुन्दरता, सारी ऊचाई और सारा एकाकीपन मेरा है ··

आखिरी पक्तिया

शॉपेनहावर की जेब मे पडे हुए सोने क सिक्के की तरह हम भी कई लोग—छोटे छोटे शॉपेनहावर—सोने की डली जैसा किसा न किसी सोच का सिक्का जेब में डाल घूमते है शॉपेनहावर बरसो उस घडी का इन्तजार करता रहा—जिस घडी वह सोने का सिक्का दान कर सकता। वह घडी उसकी जिन्दगी म नही आई। सिक्का उसकी जेब मे ही पडा रहा। और जिन्दगी की आखिरी सास तक उसे अपनी जेब का बोझ ढोना पडा। शायद हमारी भी कइयो की, यही तकदीर है

कहते है शॉपेनहावर जिस होटल म दो वक्त रोटी खाता था, रोटी की मज पर, रोज सोने का एक सिक्का रखकर रोटी खाना शुरू करता और आखिर मेज स उठने लगता तो वह सोने का सिक्का फिर जब म डाल लेता। बरसो बाद एक बरे ने उससे यह भेद पूछने की जुरत की। उसने सोचा था कि यह कोई शॉपेनहावर की खानदानी रस्म होगा। पर शॉपेनहावर ने उसे अपनी एक अजीब हसरत बताई— मैंने आज तक कभी दान नहीं किया, पर यह सोने का सिक्का मैं रोज इस आस से जेब म स निकालता हू कि मैं उस पहली घडी यह सिक्का दान करूगा

जिस दिन मै किसी अंग्रेज को घोडों, औरतो, और कुत्तो के सिवाय किसी चीज़ के बारे मे बात करते सुनूगा···"

शॉपेनहावर होने का कोई दावा नही—यह सिर्फ आस-पास दूर-दूर तक फैले हुए 'डिके' की बात है। 'मॉरेलिटी' के सीमित अर्थों, और सिकुडे हुए घेरो की बात है। और उस दृष्टिकोण की बात, जो बहुसख्यको की आदतो मे शुमार हो तो स्वीकृत माना जाता है, पर जो गिने-चुने लोगो का चिन्तन हो तो अस्वीकृत।

('डेमोक्रेसी' सिर्फ उन्नत और विचारशील लोगो को मुआफिक आती है, पर मानसिक और आर्थिक तौर पर पिछड़े हुए लोगो को यह नसीब नही हो सकती। मूर्ख बहुसख्यक के मूर्ख फैसले वक्त की लगाम सम्भालते है—और ज़िन्दगी की विशाल सीमाएं उनके खुरो के नीचे कुचली जाती है। ये लोग 'आपरैस्ड' हो तो एक रेवड की तरह हाके जाते है, 'आपरेसर' हो तो एक लाठी की शक्ल में हाकते है। हालते दोनो ही भयानक है।)

नीत्शे ने सीमित अर्थों वाले इन्सान से, विशाल अर्थों वाले इन्सान को अलग करने के लिए 'सुपरमैन' शब्द गढा था, मैंने ऐसा कोई शब्द नही गढा, पर मेरे सबसे पहले नॉवेल के डाक्टर देव को कुछ ऐसे ही अर्थो मे लिया गया था। हमेशा सोचती रही हू, क्या यथार्थवाद के अर्थ इतने सिकुड गए है ? क्या बहुसख्यक का जाना-पहचाना जो कुछ है, सिर्फ वही यथार्थ है ? और क्या अल्पसख्यक कहे जाने वाले लोगो का अमल यथार्थ नही ?

पर सच की तलाश जिसकी प्यास हो, और सिर्फ 'सर्वाइवल' जिसकी तसल्ली न हो, यकीनन वह मॉरेलिटी के जाने-पहचाने अर्थों से टूट जाएगा।

डॉक्टर देव' की ममता पर, एक सवाल' की रत्ना पर 'धरती सागर और सीपियां' की वरमी पर 'एक थी अनीता' की अनीता पर 'धरती सागर सीपियां' की चेतना पर 'जेब नं० छत्तीस' की मनवा पर और 'दिल्ली की गलियां' की एकता पर इस जुरत का दाग है। ये दाग हैं क्योंकि किसी तरह कबूल नहीं था।

अंधेरे में भागे जाते झूठ के बजाय इन्होंने उजाले में सच को भोगना चाहा—चाहे इम्मॉरल कहलवाने की कीमत दी। अंधेरे की मॉरलिटी से उजाले की इम्मॉरेलिटी इनका चुनाव था।

'सुपर' जैसा कोई शब्द मैं इन पात्रों के साथ जोड़ना नहीं चाहती—इनका वजूद और उसका इजहार सिर्फ एक लेखक के तौर पर जेब में डाले हुए सोचों के सिक्कों को खर्चने का यत्न है—इस भाव से कि अगर बहुत नहीं, तो शायद कुछ लोग, थोड़ा औरतों और कुत्तों के सिवाय किसी और चीज़ की बात भी सुनना चाहेंगे (पश्चिमी स्तर के मुकाबले में जो पूर्वी स्तर के अनुसार कहना चाहें तो औरत, पैसा और परलोक कहा जा सकता है।)

मैंने अपने नॉवेलों में जिस औरत की बात कही है, वह सिर्फ 'सेक्स चिह्न' के अर्थों से टूटकर चलती है इसलिए वह अलग है। और इसलिए चाहे वह 'एरियल' की एकता (एक औरत) के मुंह से हो या 'जलावतन' के मलिक (एक मर्द) के मुंह से—वह इंसान की बात है। एकता का दुखांत है कि उसके साबुत अस्तित्व के लिए, इंसान को सिर्फ टुकड़ों में कबूलने वाले समाज की व्यवस्था में कोई जगह नहीं। और मलिक का दुखांत है कि उसकी उम्र से बड़े उसके मानसिक स्तर के वास्ते, कुछ लकीरों में लिपटे हुए समाज के ढांचे में उसकी कोई पूर्ति नहीं।

सच्चाई का जिज्ञासु मर्द भी हो सकता है और औरत भी। सिर्फ सच की परिभाषा अपने अपने मानसिक विकास के अनुसार होती है

इस नये नॉवेल का नायक एक मर्द है—कोई बीस वरसो की उम्र का, जवानी की पहली सीढी पर खडे होकर अपने वजूद को एक वेबसी से देखता, अपने माहौल को घूरता, और उसका कारण वने लोगो से क्रुद्ध। अपने क्रोध को वह आग की तरह जलाता है और उसके अगारो से खेलता, अपने हाथ पर भी छाले डलवाता है और अगर बस चले तो उसकी चिन्गारी उनकी झोली मे भी फेकता है जिनका अस्तित्व उसके अस्तित्व से सम्वन्धित है। यह सच्चाई को उसी एक कोण से देखने का प्रतिक्रम है, जिस कोण से देखने की आदत उसे उस के जन्म से मिली है—और जिस कोण से यह अक्सर देखी जाती है।

'ग्रोथ' इन्सान को एक कोण पर नही खडा होने देती। यह नायक 'ग्रोथ' का चिह्न है, इसलिए जव वक्त आता है, वह किसी और कोण पर खडा होकर सच्चाई को देखने से इन्कार नही करता। न उसको समझने से इन्कार करता है।

ज़िन्दगी अपने जाने-पहचाने अर्थों में जिस दायरे का नाम है उसको एक नज़्म में मैंने कुछ इस तरह कहा था .

छे कदम पूरे ते इक अधा
जेल दी इक कोठड़ी
कि बन्दा बैठ उठ सके
ते निसल वी हो लवे।
'रब' दी इक वही रोटी
'सबर' दा बकल सलूणा
चाहवे ताँ रजपुज के
उह दोवे डग खा लवे
ते जेल दे हाते दी गुठ्ठे

इक छप्पड ज्ञान दा
कि बन्दा हथ मुह धावे
(ते कुज मच्छर नतार के)
आह बुक भर के पी लवे'

पर मान का खडे पानी का जोहड बनाना ज्ञान की हतक है और उसके बासीपन को चुल्लू भर पीकर एक तृप्ति हासिल करना इन्सान की हतक। और कुछ लोग ऐसे होते है—जो यह हतक नही कर सकते

इन्सान के ऊंच मानसिक स्तर की सम्भावना को अगर एक पंक्ति म कहना हो तो कुछ ऐसे कह सकती हू—इन्सान हर खाई के ऊपर आप ही एक पुल बन सकता है आप ही उस पुल पर से गुजरने वाला और आप ही अपने से आगे पहुचने वाला।

---

१ छ कदम पूरे और एक आधा
जेल की एक कोठरी
कि आत्मा बैठ-उठ सके
और निवृत्त भी हो ले,
प्रभु का एक बासा टुकड़ा
सब्र' का सलोना बक्कल
वह चाहे तो इसे ही
दोनों वक्त खा ले
और पास के अहाते के पास
ज्ञान का एक जोहड़
कि आत्मा हाथ मुह धोवे
(उसके मच्छर नितार कर)
और घूट भर पी भी ले

इस नॉवेल के नायक को मैं उसकी जन्म-कहानी से लेकर जानती ··उस दिन से जिस दिन उसको साधुओ के किसी डेरे में चढाया गया ा—यह बहुत बरसो की बात है। अब देखे हुए बरसो गुजर गए, पर ाब भी याद करू तो बड़े तराशे हुए नक्शो वाला उसका सावला मुह, उसकी उदासी समेत. आंखो के आगे आ जाता है। उसके बचपन का, उसका बार-बार कुछ सोचता हुआ मुह मुझे याद है, पर नही जानती कि उसने अपनी भरी जवानी मे ज़िन्दगी को कितना हसकर कबूल किया, कितना रोकर। मेरे नॉवेल के पन्नो मे चलता हुआ वह आखिर मे जिस अवस्था को पहुचता है, वह मेरी कल्पना है।

रवायती मय्यार, खुने आसमानो की सच्चाई नही होते, यह 'फालसरूफ' की एक सिकुड़ी हुई दानाई होते हैं। 'फालसरूफ' में कोई चाहे तो चाद-सितारे भी जड़ सकता है पर चाद-सितारो की लौ नही जड़ सकता···

इस नॉवेल के नायक को मैंने इसीलिए यात्री कहा है क्योकि सिर को छूती छत को तोड़कर वह चाद-सितारो की लौ की यात्रा आरम्भ करता है। अधेरे से पैदा हुई एक तीखी नफरत मे से उसकी यह यात्रा शुरू होती है—यही नफरत उसका हथियार है, जिसके साथ वह सिर के ऊपर तनी हुई छत को तोडने का यत्न करता है···

छत को तोड़ना, या मीलो लम्बी एक गुफा को लाघना एक ही अर्थों में है—

सिर्फ एक पक्ति में कहना हो तो कह सकती हू कि यह चाद-सितारो की लौ के आशिको के लिए, चाद-सितारो की लौ के एक आशिक की कहानी है। अपने से आगे अपने तक पहुंचने की यात्रा।

पांच बरस लम्बी सड़क

यह किसी एक सड़क की बात नही। बहुत सारी सड़को की है। इसलिए यह सिर्फ एक सड़क पर चलते हुए पात्रो की बात नही, अलग-अलग सड़क पर चलते अलग-अलग पात्रो की बात है। किसी पात्र का कोई नाम नही, पर हर सड़क का नाम है—पांच बरस लम्बी सड़क। पाच बरसो के अरसे को नियत कर लेना, सिर्फ एक 'सरवे' की खातिर है।

धरती की मिट्टी सब पात्रो के पैरो के साथ लगी हुई हैं—उनके पैरो के साथ भी जिनकी कोमल छाती मे कुछ सपने पख खोल रहे हैं। और उनके पैरों के साथ भी, जिनकी छाती मे उनके सपने सिर्फ सास घोटकर बैठे हुए है। और उनके पैरो के साथ भी जिनका छाती मे पड़े सपनो की जून बदल गई है—और वे सपने किसी पंछी की तरह चहकने की बजाय मिर्फ कुत्ते की तरह भौंकते हैं···

आज तक मैंने जितने भी नॉवेल लिखे है, वे किसी एक राह की, और उस राह पर चलते हुए कुछ पात्रो की बात करते आए हैं। यह एक लेखक के तौर पर, एक चौराहे मे खडे होकर, अलग-अलग राहो को देखने का, और उनपर चलते अलग-अलग राहियो को जानने का एक

तजुरबा है।

एक सड़क के राही दूसरी सड़क के राहियों को नहीं जानते। सब एक दूसरे से अपरिचित हैं। इसलिए एक सड़क की कहानी अगर एक काड है तो दूसरी सड़क की कहानी उसका दूसरा काड नहीं। न तीसरी सड़क की कहानी उसका तीसरा काड है। और इसलिए यह एक नावल नहीं। पर जो इसके पाठक इसको एक चौराहा मान लें और हर सड़क पर बीतती कहानी को जिन्दगी के तजुरबे का एक अंग समझ लें तो सारे मरव' की एक अपनी आकृति बनती है। इस आकृति को, वे चाहें तो नॉवेल भी कह सकते हैं।

पर यह सब कुछ नॉवेल के पहचाने हुए अर्थों में नहीं।

अर्थ हैं पर पहचाने हुए नहीं। उसकी पहचान के लिए एक शब्द जो सबसे ज्यादा मदद दे सकता है वह एबसर्ड है। और एक अनुमान भी मदद दे सकता है कि सड़कें, जो बिल्कुल अलग अलग और विपरीत रास्तों पर जाती दिखती हैं क्या पता आगे जाकर एक दूसरी में मिल गई हों और जो पात्र एक सड़क पर जाते दिखते हैं वहां भूल भटक दूसरी सड़क पर पहुंच गए हों। या एक के हालात अगर दूसरे की तरह होते तो वह, वही होता जो आज दूसरा है मैं यह नहीं कहती कि यह ऐसा हुआ है सिर्फ यह कि ऐसा भी हो सकता है। इसलिए मैंने कहा था किसी पात्र का कोई नाम नहीं दिया, यह या 'वह' कहकर हो, और 'मर्द' या औरत' कहकर हालात बताई है।

बात है पर रेंज और एबसर्ड।

पांच बरस लम्बी सड़क

नशा सगीत का भी था, कॉकटेल का भी, और शायद ढलती रात का उनीदापन भी था, नाचते हुए जोडो की आखे आधी सोई हुई-सी थीं।

सिर्फ विजली के दूधिया वल्व पूरी तरह जाग रहे थे।

अचानक अधेरे ने अपना हाथ आगे किया, और रोशनी की आखों पर अपनी हथेली रख दी।

अधेरे के होठो मे से धीमी-सी आवाज़ आई—हैप्पी न्यू ईयर।

जवाव मे सबके होठ हिले—और जो भी कोई नजदीक था, उसके गाल या गर्दन के मास से छूकर, होठो की तरह ही गीले हो गए।

सिर्फ एक लडकी के होठ और सूखे-से हो गए, और उसके जो भी नजदीक था, उसके गाल या गर्दन को छूने की जगह, अपने होठों पर अपनी जीभ फेरी।

उसकी आखो ने, अधेरे की तरह फैलकर, अधेरे को टटोला। और फिर अपने गले में पडे हुए सिल्क की स्कार्फ की तरह, वह कमरे मे से सरककर एक कोने मे चली गई।

उसने सचमुच अधेरे को टटोलकर उसे ढूढ लिया था। वह कोने

में खडा था।

—वाट यू गिव मी ए न्यू ईयर किस ?'—लडकी ने कहा और उसे लगा कि उसके मुह का रग शायद बहुत लाल हो गया था।

पर उसे तसल्ली थी कि इस अधेरे म उसके मुह का रग किसी को नही दिख सकता। कमरा उसी तरह अधेरा था पर उस लडकी को लगा, कमरे के इस कोने में हल्की सी रोशनी थी।

शायद इसलिए कि कोने म खडे उस लडके की कमीज़ बहुत सफेद थी।

कमीज़ के सफेद रग मे हल्की-सी हरकत हुई। और उस लडके ने अपनी बाह लडकी के गिर्द लपट दी।

लडकी को लगा—उसके गिर्द हल्की-सी रोशनी की एक धारी लिपट गई थी।

लडकी ने सफेद कमीज़ की धुधली सी रोशनी को अपने सिर से छुआ। और फिर उसे लगा उसके सिर क ठडे बालो में एक गम सी सास मिल रही थी।

हैप्पी न्यू ईयर अचानक बिजली के बल्ब खिलखिलाकर बोल पडे।

सिर्फ लडकी क घने बालों मे डूबे हुए उस लडके के होठ चुप थे।

लडकी ने अपने गले म पडा हुआ सिल्क का स्कार्फ अपने गले से उतारा, और सिर पर बाध लिया।

शायद वह सोच रही थी कि अपने बालो म पडे हुए उस लडके के सासों को वह अच्छी तरह ढाप ले।

कमरे म खडे हुए जितने भी और थे वह खान की मेज की तरफ बढे।

—तुम्हे भूख लगी है ? —लडकी ने मेज से आती हुई प्लेटो की खडखडाहट मे उस लडके से पूछा।

—जो तुम्हे लगी हो तो।

—एक की भूख का दूसरे की भूख से क्या वास्ता ? —लडकी हस-सी पडी।

लडके ने कहा कुछ नही, सिर्फ हस दिया।

—चलो, वाहर लान में चलें।

वाहर लान मे अधेरा था। पर वैसा अधेरा नही जो जलती विज-लियो को अचानक बन्द करने से हो जाता है।

—तुम्हे पता है, मैं वाहर अधेरे मे क्यो आई हू ? —लडकी ने एक पेड के तने के पास खडे होकर कहा।

लडके ने कहा कुछ नही, सिर्फ उसकी तरफ देखा।

वह पेड के तने के पास खडी हुई एक पतली-सी वेल सरीखी लग रही थी।

—उस वक्त जव उन्होने विजलिया वुझाई, मुझे लगा नये वरस के आगमन मे उन्होने पुराने वरस को किसी अधेरे में फेक देना चाहा था। पुराने वरस को अधेरे मे फेंकने की क्या जरूरत थी ? मै वाहर अधेरे में उनके फेके हुए वरस को ढूढने आई हू।

—तुम्हे यह वीता हुआ वरस वहुत अच्छा लगता था ?— लडका हस पडा।

—अपने वीतने से दो घण्टे पहले वह मुझे वहुत अच्छा लगने लगा था। —लडकी ने वताया।

लडके को पूछने की जरूरत नही थी। वे सारे कालेज के साथी,

पिछले दो घण्टा से, इस कमरे म बरस की आखिरी शाम मना रहे थे। और लडकी को उस बरस का पिछले दो घण्टा स अच्छा लगना इसी कमरे म हुआ था।

—जो तुम चाहो, तो नया बरस भी तुम्हे अच्छा लग सकता है। पुराने बरस की तरह।—लडके ने सिर्फ इतना कहा।

—अच्छा लगन से मेरा मतलब है वह मेरा था। मेरे पास था।

—सिर्फ दो घण्टे स।

—चाहे सिर्फ दो घण्टा से।

—और नया बरस ?

—यह पता नहीं कितने मिनट मेरा रहेगा। अभी मुझे वापस घर जाना पडेगा तो फिर यह मेरा नही रहेगा।

लडकी ने एक गहरा सास लिया और फिर कहा—जब बिजलिया जल रही थी, तुमने उसे देखा था ?

—किसे ?—लडके ने जेब म हाथ डालकर सिगरेट की डिबिया निकाली और एक सिगरेट जलाकर पीता हुआ कहने लगा—तुम्हारे दोस्त को ?

—वह मेरा दोस्त नेहा।

—पर मैंने हमेशा तुम्हे उसके साथ देखा है।

—मैंने भी हमेशा अपने आपको उसके साथ देखा है।—लडकी हस पडी और कहने लगी—पर आज मैं अपने आपको उसके साथ देख देख-कर थक गई हू।

—मेरा ख्याल था उससे तुम्हारा ब्याह होगा।

—मेरा भी ख्याल है उसके साथ मेरा ब्याह होगा।

लडके के पास हसने के सिवा चारा नहीं था। इसलिए वह हस पडा। लडकी को गुस्से की एक झुझलाहट-सी हुई, और वह कहने लगी—

यह हसने वाली वात है ?

और फिर लडकी ने उस लडके के हाथ से सिगरेट पकड ली, और उसे पीती हुई कहने लगी—आज मुझे सारे गुनाह करने है। आज मैने काकटेल भी पहली वार पी है, सिगरेट भी पहली वार पी रही हू, और जीने की कोशिश भी पहली वार कर रही हू...

यह भर जाडे की रात थी। आधी रात। पर लडकी को अपना जिस्म तपता-सा लगा—खासकर अपना सिर। उसने सिर पर वाधा हुआ सिल्क का स्कार्फ खोल दिया। उसके सिर के वाल वहुत छोटे थे। गर्दन से भी ऊपर तक कटे हुए। उसने जव स्कार्फ खोल दिया, वालो ने उसके माथे पर एक झुरमुट-सा डाल दिया।

लडके को लगा, पेड के तने से लगकर खडी हुई उस वेल सरीखी लड़की मे अचानक वहुत सारे फूल लग गए थे।

वालो के कुडल फूलो की तरह हिल रहे थे। लड़के ने धीरे से फूलो को सूघा।

लडकी का सिर आगे झुका। लड़के को लगा—फूलो का एक गुच्छा उसके कन्धो को छू रहा था।

लडके के होठो का सास, ओस की तरह फूलो पर पडता रहा।

—तुम्हे वह कैसा लगता है ?—लडकी ने पूछा। और लडकी को खुद ही लगा कि जैसे उसकी आवाज़ सिसक गई थी।

—कौन ?—और फिर लडके ने खुद ही कहा—वह तुम्हारा दोस्त ?

—मैने अभी कहा था, वह मेरा दोस्त नही।

लडके का उसकी कही हुई वात याद थी, फिर भी उसकी वात करने के लिए उसे एक यही लफ्ज सूझा था। कहने लगा—मै उसे वहुत नही

जानता, पर अच्छा ही होगा, वह हर साल फस्ट आता है।

लडकी के जिस्म की बेल सरीखी नर्माई कस सी गई। और वह कहने लगी—सब यही कहते है। मेरे मा-बाप भी यही कहते हैं। अच्छे होने की निशानिया होती है हर साल फस्ट आना, एक अमीर बाप का बेटा हाना, और फिर आई० सी० एस० बनना

लडका हस पडा। सिफ एक बार उसका जो चाहा कि वह लडकी के इस रोप मे बल से खात हुए होठो को कसकर चूम ले। पर उसने हसकर अपने हाठो को रोक लिया।

सिफ उसका सास लडकी के हाठो को धीमे से छूकर पेड के तने के पास गिर गया। और लडकी को लगा—शायद उसका सास भी बीते हुए बरस की तरह था जो अधेरे मे गिर गया था।

—तुम फस्ट क्यो नही आते ? लडकी का सवाल वडा अचानक था। जसे अधेरे मे गिरे हुए उस लडके के सास को और बीते हुए बरस को वह अधेरे म हाथ मारकर ढूढ रही हो।

—तुम्हारा मतलब है मैं अच्छा लडका क्या नही बनता ?

—तुम्हें पता है मेरे मा-बाप तुम्हारे बारे मे क्या कहते हैं ?

—मेरा ख्याल है वह मुझे जानते नही। इसलिए जान बिना कुछ नही कह सकते।

—वह तुम्ह बहुत बुरा लडका समझते हैं।

—यह उनकी समझ के मुताबिक है।

—तुम्हारा मतलब है उनकी समझ उनकी समझ को तुम क्या कहना चाहागे ?

—सिफ इम्मच्योर[1]।

लडका खिलखिलाकर हस पडी। कहने लगी—अगर काई बीस

[1] भावनाओं की दृष्टि स अपरिपक्व

वाईस वरस के एक लडके को एक चालीस वरस के आदमी के वारे मे या औरत के वारे मे यह कहते सुने तो ?

—किसी को जाने विना उसके वारे मे कुछ सोच लेना इम्मेच्योरिटी होती है, चाहे सोचने वाले की उम्र कितनी ही हो।

—पर मैं पूछ रही थी कि तुम फर्स्ट क्यो नही आते ?

—क्योकि मुझे कभी नौकरी नही करनी है। मुझे कभी सिविल सर्वेंट नही वनना।

लडकी फिर खिलखिलाकर हस पडी। कहने लगी—हिटलर की तरह ? हिटलर का भी जिन्दगी मे सवसे पहला फैसला यह था कि वह कभी सिविल सर्वेंट नही वनेगा।

—तुम इस वात से मुझे हिटलर के साथ मिला सकती हो। और शायद किसी बात से नही।

—दज स्पोक ज़रथुस्त्र—लडकी ने कहा और हस पडी।

लडके को कालेज मे 'लिटिल नीत्शे' कहते हुए, लडकी ने कइयो को सुना था। और नीत्शे के फिलासफर पात्र ज़रथुस्त्र का नाम भी उसके साथ जोडकर, उसकी कही वात को दोहराते, कहते थे—दज स्पोक ज़रथुस्त्र··

इस वक्त लड़की ने यह शब्द सिर्फ एक मुहावरे की तरह दोहराए थे।

—मैं नीत्शे वन सकता हू, चाहे अन्त में पागल होना पडे। पर हिटलर नही वन सकता।—लडका हस पडा।

—हिटलर भी, शायद डिक्टेटर वाला हिटलर नही वनना चाहता था। वह एक आर्टिस्ट वनना चाहता था। पर उसे आर्ट स्कूल में दाखिला नही मिला था।

लडकी के गले में पडा हुआ सिल्की स्कार्फ उसके गले से फिसलकर,

परो म गिर पडा था। इतना लडकी के परो म नहीं—जितना लडके के पैरो म।

लडके ने परो म से स्काफ उठाया। जिस वक्त वह स्काफ को लडकी का गदन म लपेटने लगा लडकी ने उसका हाथ पीछे की तरफ मोडकर, स्काफ को लडके की गदन म लपट दिया। फिर हस पडा—तुम्ह पता है, हिटलर को आट स्कूल मे दाखिला क्यो नही मिला था?

—क्यों?

—आट स्कूल का प्रिंसिपल जरूर मरे बाप की तरह होगा। इस्म प्यार।

वह हसे जा रही थी। वह एक बेल की तरह नाजुक थी पर उसकी बात सुनकर लडके को लगा—वह परो-पर ऊची होती सारे पड पर फल रही थी।

स्काफ अभी लडके के गले म था। लडके के खून में कुछ उफान-सा आया। उसके जी म आया कि वह इस रेशमी स्काफ की तरह इस रेशमी स्काफ सरीखी लडकी को कसकर अपनी छाती स लगा ले।

उसने दो तीन लिम्बे स सास लिए—जसे अपने गम खून को वह फूकें मारकर ठडा कर रहा हो।

—क्या सोच रहे हो?

लडका कुछ नहीं सोच रहा था। सिफ अपने खून को कुछ ठडा कर रहा था। पर लडकी के पूछने पर उसे एक ख्याल आया, और उसने कहा—सोच रहा था अगर इसी तरह स्काफ को अपनी गदन म डाले मैं अदर कमरे म चला जाऊ?

—मुझे कोई एतराज नहीं।

—तुम्हारा बाप देख लेगा।

—वह अव भी कही न कही खडा होकर जरूर देख रहा होगा। उसने तुम्हे उस वक्त भी देखा था, जिस वक्त वारह वजे के अधेरे के वाद कमरे की विजलिया फिर से जली थीं। और उस वक्त भी देखा था जव उससे एक घण्टा पहले मैंने तुम्हारे साथ डास किया था।

—उसने तुमसे कुछ कहा था?

—ही हेट्स यू।[1]

—पर मुझे उससे कोई नफरत नही।

—वह अच्छा लडका है इसलिए नफरत का हक सिर्फ उसे है।

रात और ठंडी हो गई थी। लडकी के गले मे पडे हुए स्वेटर के ऊपर के वटन खुले थे। लडके ने उसके वटन लगा दिए।

लडकी की सास फिर गर्म-सी हो गई। और उसका जी चाहा कि वह स्वेटर के वटन फिर खोल दे। इसलिए नही कि लडके को फिर एक वार वटन लगाने पडे, सिर्फ इसलिए कि उसकी छाती का सास सचमुच वहुत गर्म हो गया थी।

—यह क्या है? लडकी ने खिची-सी सास लेकर कहा।

—क्या?

—समथिग वैरी एलाइव।[2] तुम्हारे साथ डास करते हुए भी मुझे लगा था। फिर उस वक्त भी जिस वक्त कमरे के अधेरे मे तुम्हे खोजती मै तुम्हारे पास आई थी। और अव फिर—जिस वक्त तुमने मेरे स्वेटर के वटन वन्द किए है··

—इट इज मी[3]···

---

१ तुमसे नफरत करता है।

२. कुछ वहुत जानदार।

३. यह मै हू ·

—यू आर ए स्ट्रेंज परसन[1]

—ह्याय ?[2]

—बिकाज यू आर सो एलाइव ह्याय आर यू सो एलाइव ?[3]

लडकी ने एक बल सा खाकर अपना सिर उस लडके के कन्धे पर रख लिया। दोनो म पेडा की टहनियो की तरह कुछ उलझ सा गया।

लडकी का सास सुबकियो जसा हो गया था। उसकी आवाज उसक सासा म और सुबकियो म फसी हुई थी—मुझे लगता था जसे हर किसी मे कुछ मर गया होता है ऐवरी बाडी इज डड ऐट लीस्ट फिफ्टी परसेंट सिक्स्टी परसेंट इज डड ए व री बा डी ऍड ही इज द डडेस्ट आफ आल ४

इस ही के बारे मे पूछने की लडके को कुछ जरूरत नही थी। जिस दोस्त के घर यह पार्टी थी यह लान उस घर के पिछली तरफ था। लडके को लगा—कि घर की अगली तरफ कुछ कारा और स्कूटरा की आवाज़ आ रही थी। पार्टी शायद खत्म हो गई थी। उसने लडकी का वक्त का ध्यान दिलाया।

—मैंने तुमसे कहा था मैं अभी घर चली जाऊगी और फिर यह नया बरस मेरा नही रहेगा।

— पर

— पर से कुछ नहीं बनेगा। मेरे घर पहुचने से पहले ही शायद यह

---

१ तुम अद्‌भुत व्यक्ति हो।

२ क्यों ?

३ क्योंकि तुम इतने जानदार हो क्यों हो तुम इतने जानदार ?

४ हर कोई मर चुका है कम से कम पचास या साठ फीसदी मर चुका है ह र को ई और वह इन सबसे ज्यादा मृत है।

वात वहा पहुंच गई होगी। या सवेरे पहुंच जाएगी।

—तुम्हारा ख्याल है वह तुम्हे कुछ कहने की जगह···

—वह मुझे कुछ नही कहेगा। आई टोल्ड यू ही इज़ द डेडेस्ट आफ आल। पर ऐसे डेड लोगो मे चुगलिया खाने की हिम्मत सवसे ज्यादा होती है।

—अगर मुझे इसका पता होता···

—फिर तुम मुझे वाहर लान मे लेकर न आते ? और हम अन्दर आराम से एक दूसरे को कहते 'हैप्पी न्यू इयर', 'सेम टू यू'—यह हर एक को कहे जाते, और प्लेटो मे से चावल खाए जाते, और फिर उसपर आराम से पुडिंग खाकर घर चले जाते।

लडके ने लडकी के जलते होठो को अपने होठो मे ले-सा लिया। और लडकी के होठ ठडे अवेरे की तरह शान्त हो गए।

और फिर लड़के ने अपनी गर्दन से स्कार्फ उतारकर लडकी के सिर पर वाव दिया।

पूरे वाईस दिन गुजर गए थे। छुट्टियां भी खत्म हो गई थीं। पर लडकी कालेज नही आई थी।

चलती हवा को भी कान लगाने से, कोई न कोई सुराग मिल जाता है पर लडके को कोई खवर नही मिली थी।

तेईसवें दिन एक खत आया। खत को खोलते हुए लडके के पपोटे काप-से गए। उसी का खत था, लिखा था—गुनाहो की सूची शायद अभी वहुत लम्बी नहीं हुई। सारा घर मेरे लिए एक 'प्रिज़न' की तरह है, और आज यह खत इस 'प्रिज़न' में से स्मगल करवा रही हू। स्मग-लिंग का गुनाह अभी वाकी रहता था। इसमें सिर्फ यह पता देना है कि

कल दोपहर को तीन बजे स्टेट लाइब्रेरी म जरूर ग्राना। सिफ एक दिन के लिए लाइब्रेरी म जान की इजाजत मिला है।

सत दूसरे दिन मिला था। यही वह खत था जो लडके ने घडी की तरफ देखा घडी न ग्राने वाली घडी की तरफ

लाइब्रेरी म हजारो किताबें थी। इन किताबो ने दुनिया के पता नही कितने हजार लोगो को अपने पृष्ठो म पनाह दे रखी थी—पर इन पृष्ठो के बाहर भी ग्राज कोई दो जने थे, जिह इहोने पनाह दी।

यह जिन्दगी म पहली बार था, जब लडके का रोने को जी चाहा। लडकी का मुह पिघलकर सिफ उसकी दो ग्राखें बन गया था।

—मैंने ठीक कहा था मेरे घर पहुचने से पहले उन तक यह बात पहुच चुकी थी। दट ईडियट रग माई फादर।[१]

—पर फादर

—मैंने स्टालिन को नही देखा सिफ उसके वक्त जो कुछ हुग्रा था वह पढा है। पर उस दिन मैंने देखा भी। सचमुच उस दिन मेरे फादर की शक्ल भी स्टालिन की तरह हो गई थी।

लडकी हस-सी पडी। लडके ने उसके बाईस दिनो की भयानकता को इस तेईसवें दिन कुछ ग्रासान सा करने के लिए उसकी हसी की रौ समाल ली। कहने लगा—तो ग्राज से मैं तुम्हे मिस स्टालिन कह सकता हू।

इस बार लडकी की हसी बडी स्वाभाविक थी। कहने लगी—इस नाम का मुझे ख्याल नही ग्राया पर उस रात मैंने जरूर सोचा था कि मैं

सामने मेज पर कुछ किताबें पडी था। एक किताब की जिल्द का

१ उस बेवकूफ ने मेरे पिता जी को फोन कर दिया।

पीला रग लडके के मुह पर फिर गया ।

—तुम घवराओो नही । मैंने मरने के वारे मे नही सोचा था । सिर्फ उस घर को छोडने के बारे मे सोचा था ।

इस बार मेज़ पर पड़ी हुई एक और किताब का गहरा-सा रंग लडके के मुह पर छा गया ।

—वह अब मुझे इस कालेज मे नही भेजेगे । पर पढाएगे ज़रूर । क्योकि उनके ढूढे हुए लड़के को आई० सी० एस० वनना है । और आई० सी० एस० की वीवी का पढना जरूरी है । वह मुझे कलकत्ता भेज रहे है, होस्टल में पाच बरसो के लिए ।

—यह तुम्हारे कालेज का पहला वरस है ?

—पहला वरस । इसीलिए तीन साल बी० ए० के और दो साल एम० ए० के । कुल पाच साल ।

—यह सब तुम्हे कैसा लगता है ?

—टैररिज्म[1] ।

लडका बोला नही ।

—तुम चाहो तो मैं अभी, इसी घडी सब कुछ छोड़ सकती हू ।

लडका कुछ देर तक उसकी तरफ देखता रहा । वह घबराई हुई नही थी । सिर्फ उसकी अडोलता कुछ सोच रही-सी लगती थी ।

—गुनाहो की सूची शायद अभी बहुत लम्बी नही हुई ।—लड़के ने लड़की के शब्दो को दुहराया ।

—भागने का गुनाह अभी बाकी है ।—लडकी हस पडी ।

—यह गुनाह छोटा है । मेरा ख्याल है, इससे वड़ा गुनाह करना चाहिए ।

—यह छोटा है ?

१. अत्याचार

—छोटा इसलिए कि वक्त बीतने पर तुम्हें पछतावा भी हो सकता है।

—तुम्हारे होते हुए मैं पछताऊंगी नहीं।

—अभी तुम बहुत छोटी हो।

—बालिग हू, अठारह साल की।

—कच्चे रेशम सी।

लड़की एलास्टिक की जीन, और गले म रा सिल्क का ब्लाउज पहने थी। कहने लगी—कच्चे रेशम की मैं नही, सिर्फ मेरा ब्लाउज है।

—तुम नही सिर्फ तुम्हारा ब्लाउज और तुम्हारी उम्र।—लड़के ने एक गहरा सास लिया। फिर कहा—मैंने तुम्हें बताया था कि मैं सिविल सर्वेंट कभी नही बनूगा। मैं सिर्फ लिखना चाहता हू। बन सका तो राइटर बनूगा नही तो जर्नलिस्ट। तुम बड़ी अमीरी मे पली लड़की हो

—अमीरी म, पर बड़ी सस्ती म।—लड़की ने टोककर कहा।

लड़का मुस्करा दिया। बोला कुछ नहा। पर उसकी चुप जसे कह रही थी—तुम्ह पता नही, गरीबी म भी एक अजीब सस्ती होती है।

—तुम क्या चाहोगे कि मैं उस आई० सी० एस० होने वाल

मैंने यह नहीं कहा।

—फिर ?

—सिर्फ यह, कि अपनी पढ़ाई के बरस पूरे कर लो।

—पर तुमने कहा था—गुनाहो की सूची अभी बहुत लम्बी नहीं हुई

—इस हालत म सब्र भी एक गुनाह है।

—इसी को तुमने एक बहुत बड़ा गुनाह कहा था ?

—इसी का।

—फिर इसके बाद ?

—तव तुम जो भी कहोगी, वह ठीक होगा।

—मेरा वाप स्टालिन है, पांच वरसो वाद भी उसका फैसला यही होगा।

—फिर हम छोटा-सा गुनाह कर लेगे।

—भागने का ?

—हा।

लडके ने धीमे से अपनी हथेली लडकी की हथेली पर रख दी।

वक्त की सडक वहुत लम्वी लग रही थी। इस सडक पर धूप भी वहुत हो सकती थी, ठड भी वहुत, और वारिश तथा अधेरा भी। पर लड की को लगा—वह इन हथेलियो की छाव मे चल सकती थी…

तो भी एक वार उसने तरसकर लड़के की तरफ देखा। और फिर कहा—तुम्हे वह नये वरस की रात याद है ? जव उन्होने विजलिया वुझाके पुराने वरस को अधेरे मे फेका था। क्या एक दिन विजलिया वुझाके यह पाच वरम एकवारगी अधेरे में नही फेंके जा सकते ?

लडके ने उसकी हथेली कसकर भीच दी और कहा—नही एक-वारगी नही, सिर्फ एक-एक करके। और वह भी वरस नही, रोज रात की विजली वुझाकर, एक-एक दिन को अधेरे मे फेंककर…

पाच बरस लम्बी सडक

सेंक मौसम का था मन का नही ।

हवाई जहाज वक्त पर आया था पर नीचे एयरपोर्ट स अभी सिग-नल नही मिल रहा था । जहाज को दिल्ली पहुचने की खबर ऊपर भी, अभी दस मिनट और गुजारने थे इसलिए शहर के ऊपर उसको कुछ चक्कर लगाने थे ।

उसने खिडकी म से बाहर झाकते हुए शहर के मुडरे पहचाने, मुडेरे, किले खडहर, खेत

'क्या पहचान सिर्फ आखो की होती है ? आखें इस पहचान को अपने से आगे कही नीचे तक क्या नही उतारती ?'—उसे ख्याल आया । पर एक धुन जसी सोच की तरह नही ऐसे ही राह जाता ख्याल ।

मुडेरे किले खडहर खेत उसने कई देशो के देखे थे । हर देश मे इन चीजों के यही नाम होते हैं चाहे हर देश म इन चीजा का अलग अलग इतिहास होता है । इनके रग इनके कद इनकी मुह-मुहार भी अलग अलग होती है—एक इसान से अलग दूसरे इन्सान की तरह । पर फिर भी इन्सान का नाम इसान ही रहता है । मुडेरा का नाम भी

मुडेरे ही रहता है, किले का नाम भी किला ही···

सिर्फ एक हल्का-सा फर्क था—हर देश मे इन चीजो को देखते वक्त एक ख्याल-सा रहता था कि वह इन्हे पहली बार देख रहा था। पर आज अपने देश मे इन्हे देखकर उसे लग रहा था कि वह इन्हे दूसरी बार देख रहा था और उसे ख्याल आया अगर वह फिर कुछ दिनो बाद परदेस गया तो वहा जाकर, उन्हे देखकर भी, इसी तरह लगेगा कि वह उनको दूसरी बार देख रहा है। बिल्कुल आज की तरह। यह देस और परदेस का फर्क नही था। यह सिर्फ पहली बार, और दूसरी बार देखने का फर्क था।

जहाज ने लैंड किया। एयरपोर्ट भी जाना-पहचाना-सा लगा, दूसरी बार देखने की तरह। इससे ज्यादा उसके मन मे कोई सेक नही था।

ओवर कोट उसके हाथ मे था। गले का स्वेटर भी उतारकर उसने कन्धे पर रख लिया।

सेक मौसम का था, मन का नही।

कस्टम में से गुजरते वक्त उसे एक फार्म भरना था कि पिछले नौ दिन वह कहा-कहा रहा था। पिछले नौ दिन वह सिर्फ जर्मनी मे रहा था। उसने फार्म भर दिया। और उसे ख्याल आया—अच्छा है, कस्टम वाले सिर्फ नौ दिनो का लेखा पूछते है, बीस-पच्चीस दिनो का नही। नही तो उसे सिलसिलेवार याद करना पड़ता कि कौन-सी तारीख वह किस देश मे रहा था। उसने वापस आते समय कोई एक महीना सिर्फ इसी तरह गुज़ारा था—कभी किसी देश का टिकट ले लेता था, कभी किसी देश का। अगर किसी देश का वीज़ा उसे नही मिलता था तो वह दूसरे देश चल पडता था···

पासपोर्ट की चेकिंग करते समय, और पासपोर्ट वापस करते हुए,

एक अफसर ने मुस्करा के कहा था— जनाब पाँच बरस बाद देश आ रहे हैं।'

बिल्कुल उस तरह जिस तरह एयर होस्टेस ने राह में कई बार बताया था कि इस वक्त तक हम इतने हज़ार किलोमीटर तय कर चुके हैं। गिनती अजीब चीज़ होती है चाहे मीलों की हो या बरसों की। उसे हँसी सी आई।

जहाज़ में से उसके साथ उतरे हुए लोगों को लेने आए हुए लोग— हाथ मिलाकर भी मिल रहे थे गले में बाँहें डालकर भी मिल रहे थे। कइयों के गले में फूलों के हार भी थे। 'पसीने की और फूलों की गन्ध में शायद एक तीसरी गन्ध और भी होती है' उसे ख्याल आया। पर तीसरी गन्ध की बात उसे एक थीसिस लिखने के बराबर लगी। वह अभी अभी एक परदेसी ज़बान सीखकर और उसके लिटरेचर पर थीसिस लिखके, एक डिग्री लेकर आया था। नये थीसिस की कोई बात वह अभी नहीं सोचना चाहता था। इसलिए सिर्फ पसीने और फूलों की गन्ध सूँघता हुआ वह एयरपोर्ट से बाहर आ गया।—

घर में सिर्फ माँ थी।

जाते वक्त बाप भी था छोटा भाई भी, और एक लड़की नहीं वह लड़की घर में नहीं थी वह सिर्फ उसी दिन उसके जाने वाले दिन आई थी। माँ को सिर्फ ऐसे ही कुछ घंटों के लिए भ्रम हुआ था कि वह लड़की छोटा भाई ब्याह कराके अब दूर नौकरी पर रहता था, घर में नहीं था। बाप अब इस दुनिया में कहीं नहीं था। इसलिए घर में सिर्फ माँ थी।

कई चीज़ें अन्दर से बदल जाती हैं, पर बाहर से वही रहती हैं। कई चीज़ें बाहर से बदल जाती हैं, पर अन्दर से वही रहती हैं।

उसका कमरा विल्कुल उसी तरह था—उसका पीला गलीचा, उसकी खिडकी के टसरी पर्दे, उसकी मेज पर पडा हुआ हरी धारियो का फूलदान, और दहलीजो मे पडा हुआ गहरा खाकी पायेदान। चादनी का पौधा भी उसकी खिडकी के आगे उसी तरह खिला हुआ था। पर पहले इस सब कुछ की गन्ध—दीवारो की ठडी गन्ध के समेत—उसके साथ लिपट-सी जाती थी। और अव उसे लगा कि वह उसके साथ लिपटने से सकुचाती, सिर्फ उसके पास से गुजरती थी और फिर परे हो जाती थी। पता नही उसके अन्दर कहा क्या बदल गया था।

मां कश्मीरी सिल्क की तरह नर्म होती थी और तनी-सी भी। पर उम्र ने उसे जैसे धो-सा दिया था। वह सारी की सारी सिकुड गई लगती थी। मा से मिलते वक्त, उसका हाथ मा के मुह पर ऐसे चला गया था, जैसे उसे हथेली से मास की सारी सिकुडने निकाल देनी हो। मा की आवाज भी वडी धीमी और क्षीण-सी हो गई लगती थी। शायद पहले उसकी आवाज का जोर उसके कद जितना नही, उसके मर्द के कद जितना था, और उसके विना अव वह नीचा हो गया था, मुश्किल से उसके अपने कद जितना। जव उसने वेटे का मुह देखा था, उसकी आखे उसी तरह सजग हो उठी थी जैसे हमेशा होती थी। उसकी छाती का सास उसी तरह उतावला हो गया था, जैसे हमेशा होता था। वह कही किसी जगह, विल्कुल वही थी, जो हमेशा थी। सिर्फ उसके वाहर वहुत कुछ वदल गया था।

"मुझे पता था, तू आज या कल किसी दिन भी अचानक आ जाएगा" मा ने कहा।

उसने अपने कमरे मे लगे हुए ताजे फूलो को देखा, और फिर मा की तरफ।

मा की आवाज़-सकुचा-सी गई—"यह तो मैं रोज़ ही रखती थी।"

"रोज ? कितने दिनों से ?" वह हस पड़ा।

"रोज मा की आवाज उसके जिस्म की तरह और सिकुड गई, "जिस दिन से तू गया था।"

"पाच बरसो से ?" वह चौंक-सा गया।

मा मकुचाहट से बचने के लिए रसोई मे चली गई थी।

उसने जेब म से सिगरेट का पकट निकाला। लाइटर पर उगली रखी तो उसका हाथ ठिठर गया। उसने मा के सामने आज तक सिगरेट नहा पी थी।

मा ने शायद उसके हाथ मे पकडा हुआ सिगरेट का पकिट देख लिया था। वह धीरे से रसोई मे से बाहर आकर और बठक म से ऐश-ट्र ला कर उसकी मेज पर रख गई।

उसे याद आया—छोटे होते हुए मा ने उसे एक बार यारो से सिगरेट पीते देख लिया था और उसके हाथ म सिगरेट छीनकर खिडकी से बाहर फेंक दा था

मा शायद वही थी पर वक्त बदल गया था।

मा फिर रसोई म चली गई। वह चुपचाप सिगरट पीने लगा।

'मुझे पता था तू आज या कल किसी दिन भी आ जाएगा ' उसे मा की अभी कहा गई बात याद आई। और उसके साथ मिलती जुलती एक बात भी याद आई। 'मुझे पता लग जाएगा जिस दिन तुम्हे आना होगा, मैं खुद उस दिन तुम्हारे पास आ जाऊगी।"

बहुत देर हुई, जब वह परदेस जाने लगा था, उस एक लडकी ने यह बात कही थी।

उस लडकी से उसकी दोस्ती पुरानी नही थी वाकफियत पुरानी थी, दोस्ती नहा था। पर पाच बरसों के लिए परदेस जाने के वक्त जाने की खबर सुनकर, अचानक उस लडकी को उसके साथ मुहब्बत

हो गई थी—जैसे जहाज मे बैठे किसी मुसाफिर को, अगली बन्दरगाह पर उतर जाने वाले मुसाफिर से अचानक ऐसी तार जुडी-सी लगने लगती है, कि पलो में वह उसे बहुत कुछ दे देना, और उससे बहुत कुछ ले लेना चाहता है।

और ऐसे वक्त पर, बरसो मे गुजरने वाला, पलो मे गुजरता है।

उसने यह 'गुज़रना' देखा था। अपने साथ नही उस लडकी के साथ।

"तुम्हारा क्या ख्याल है, मैं जो कुछ जाते वक्त हू, वही आते वक्त होऊगा ?" उसने कहा था।

"मैं तुम्हारी बात नही कहती, मै अपनी बात कहती हू" लडकी ने जवाब दिया था।

"तुम यही होगी, यह तुम्हे किस तरह पता है ?"

"लडकियो को पता होता है।"

"तो लडकिया बावरी होती है।"

वह हस पडा था। लडकी रो पडी थी।

जाने मे बहुत थोडे दिन थे। पाच दिन और पाच राते लगाकर उस लडकी ने एक पूरी बाहो वाला स्वेटर बुना था। उसे पहनाया था और कहा था—"बस एक·· इकरार मागती हू, और कुछ नही। जिस दिन तुम वापस लौटो गले मे यही स्वेटर पहनकर आना।"

"तुम्हारा क्या ख्याल है, मैं वहा पाच बरस···" उसने जो कुछ लडकी को कहना चाहा था, लडकी ने समझ लिया था।

जवाब दिया था, "मैं तुमसे अनहोने इकरार नही मागती। सिर्फ यह चाहती हू कि वहा का वहा ही छोड आना।"

वह कितनी देर तक उस लड़की के मुह की तरफ देखता रहा था।

और फिर उसको यह सब कुछ एक अनादि औरत का अनादि छल

लगा था। वह बेवफाई की छूट दे रही थी पर उसपर वफा का भार लादकर।

कह रही थी "मैं तुम्हें खत लिखने के लिए भी नहीं कहूंगा। सिर्फ उस दिन तुम्हारे पास आऊंगी, जिस दिन वापस आओगे।"

"तुम्हें किस तरह पता लगेगा मैं किस दिन वापस आऊंगा?" लड़की को टाल करने के लिए उसने कहा था।

और उसने जवाब दिया था—'मुझे पता लग जाएगा जिस दिन तुम्हें आना होगा।

उस दिन वह हंस दिया था।

उसने परदेस में पांच बरस दस थे। लड़कियां भी देखी थीं।

पर किसी घाट में उसने डूबकर नहीं देखा था सिर्फ किनारा से छूकर।

और वह सोचता रहा था—शायद डूबना उसका स्वभाव नहीं, या वह चलता है तो एक भार भी उसके साथ चलता है और उसके पैरों को हर जगह कुछ रोक-सा लेता है

इन बरसों में उसने कभी उस लड़की को खत नहीं लिखा था। लड़की ने कहा भी इसी तरह था।

हर देश की दोस्ती उसने उसी देश में छोड़ दी थी। यह शायद उसका अपना ही स्वभाव था या इसलिए कि उस लड़की ने कहा था।

फिर वापस आते वक्त, जब वह अपना सामान पैक कर रहा था उस स्वेटर को हाथ में पकड़कर वह कितनी देर सोचता रहा था कि वह उसे और चीजों के साथ पैक कर दे या उस लड़की की बात रख ले, और उसे पहन ले।

जो स्वेटर पहनकर जाना पांच बरसों बाद वहीं पहनकर आना उसे एक मूर्खता का-सा बात लगा थी। मूर्खता की-सी भी और बरबादी

भी।

और एक हद तक झूठी भी। क्योंकि जिस वदन पर यह स्वेटर पहनना था, वह उस तरह नही था, जिस तरह वह लेकर गया था।

पर उसने स्वेटर को पैक नही किया। गले मे डाल लिया। ऐसे जब वह स्वेटर पहनकर शीशे के सामने खडा हुआ—उसे आर्ट गैलरियो मे बैठे वे आर्टिस्ट याद आ गए, जो पुरानी, और क्लासिक पेंटिंग्ज की हूवहू नकले तैयार करते हैं।

और स्वेटर पहनकर उसे लगा—उसने भी अपनी एक नकल तैयार कर ली थी।

इस नकल से वह शर्मिन्दा नही था, सिर्फ इस नकल पर वह हस रहा था।

मा को वह सब कुछ याद था, जो कभी उसे अच्छा लगता था। लेकिन वह स्वय भूल गया था।

"देख तो अच्छा वना है ?" मा ने जब पनीर का परांठा वनाकर उसके आगे रखा, तो उसको याद आया कि पनीर का पराठा उसे वहुत अच्छा लगता था। मा ने जाने वाले दिन भी वनाया था।

उसने एक कौर तोडकर मक्खन मे डुवोया, और फिर मां के मुह में डालकर हस पड़ा—"वहा लोग पनीर तो वहुत खाते हैं पर पनीर की परांठा कोई नही वनाता।"

यह छुटपन से उसकी आदते थी। जब वह वडा री मे होता था, रोटी का पहला कौर तोडकर मां के मुह मे डाल देता था।

"तू सात विलायत घूमकर भी वही का वही है" मा के मुह से निकला और मा की आंखो मे पानी भर आया। भरी आखो मे वह कह रही थी—"तू आया है, सव कुछ फिर उसी तरह हो गया है।"

वह, वह नही था। कुछ भी वह नहीं था, जाते वक्त जो कुछ था,

वह सब बदल गया था। उसने बाप की बात नहीं छेड़ी थी, सिर्फ उसके खाली पलग की तरफ देखा था, और फिर आखें परे कर ली थी। मा के दिन ब दिन मुरझाते मुह की बात भी नहीं की थी। छोटे भाई की खर-खबर पूछी थी, पर यह नहा कहा था कि मा को अकेला छोड़कर उस इतनी दूर नहीं जाना चाहिए था। पर मा कह रही थी—सब कुछ फिर उसी तरह हो गया है

झटपट जो कोई भुलावा पड जाए क्या हुआ है' उसने सोचा भी यही था। मा के मुह मे अपनी रोटी का कौर भी इसीलिए डाला था।

उसने कोई और भी मा की मरजी की बात करनी चाही। पूछा—'भाभी कसी है ? तुम्ह पस द आई है ?'

मा न जवाब नहीं दिया। सिर्फ सवाल-सा किया—" मरा ख्याल था तू विलायत से कोई लड़की "

वह हस पडा।

'बोलता क्या नहीं ?

'विलायत की लडकिया विलायत म ही अच्छी लगती हैं, सब वहा छोड आया हू।'

'मैंने तो इस महीने पिछले दोनो कमरे खाली करवा लिए थे। सोचा था तुझे जरूरत होगी।'

'य कमरे किराय पर दिए हुए थे ?

छोटा भी चला गया था। घर बड़ा खाली था इसलिए पिछल कमर चढ़ा दिए थे। जरा हाथ भी खुला हो गया था '

'तुम्ह पसा की कमी थी ? उसे परेशानी-सी हुई।

"नहीं, पर हाथ म चार पैसे हो तो अच्छा होता है।

'छोटे की तनख्वाह थोड़ी नहीं, वह

"पर वह भी अब परिवार वाला है आजकल म ही उसके घर "

"सो मेरी मा दादी वन जाएगी···"

उसने मा को हसाना चाहा, पर मा कह रही थी—"मुझे तो कोई उजर नही था जो तू विलायत से कोई लड़की···"

वह मां को 'हंसाने के यत्न में था। इसलिए कहने लगा—"लाने तो लगा था पर याद आया कि तुमने जाते समय पक्की की थी कि मैं विलायत से किसीको साथ न लाऊ।"

उसे याद आया—जाने वाले दिन, वह लडकी जव मिलने आई थी, वह मा को अच्छी लगी थी। मा ने उन दोनो को इकट्ठे देखकर, ताकीद से कहा था—'देख, कही विलायत से न कोई ले आना। कोई भी अपने देश की लडकी की रीस नही कर सकती···'

पर इस वक्त मा कह रही थी—"यह तो मैंने वैसे ही कहा था। तेरी खुशी से मैंने मुनकिर क्यो होना था। पीछे एक खत में मैंने तुझे लिखा भी था कि जो तेरा जी चाहता हो···"

"यह तो मैंने सोचा, तुमने ऐसे ही लिख दिया होगा" वह हस पडा। और फिर कहने लगा—"अच्छा, जो तुम कहो तो मैं अगली वार ले आऊगा।"

"तू फिर जाएगा ?" मा घवरा-सी गई।

"वह भी जो तुम कहो तो, नही तो नही।"

उसे लगा, उसे आते ही जाने की वात नही करनी चाहिए थी। आते वक्त उसे एक यूनिवर्सिटी से एक नौकरी आफर हुई थी। पर वह इतने वरसो वाद एक वार वापस आना चाहता था। चाहे महीनो के लिए ही।

"जो तुम कहोगी तो नही जाऊगा" उसने फिर एक वार कहा।

मां को कुछ तसल्ली आ गई। कहने लगी—"तू सामने होगा, चूल्हे मे आग जलाने की तो हिम्मत आ जाएगी, वैसे तो कई वार चारपाई पर से नही उठ जाता।"

मा, तुम इतनी उदास थीं तो छोटे के साथ, उसके घर '

'मैं यहां अपने घर अच्छी हूं। अब तू आ गया है मुझे और क्या चाहिए।

उसको लगा मा बहुत उदास थी। और शायद उसकी उदासी का सम्बंध सिर्फ उसके अकेलेपन से नहीं किसी और चीज़ से भी था।

खिड़की में से आती धूप की लकीर दीवार पर वहीं शाल-सी गिर रही थी। उसने खिड़की के परदे को सरकाया। और उस गलीचे का पीला रंग ऐसे लगा जैसे निश्चित-सा होकर कमरे में आ गया हो।

'तू थक गया होगा। कुछ सो ले' मा ने कहा और मेज़ पर से प्लेटें उठाकर कमरे से जाने लगी।

नहीं मुझे नींद नहीं आई' उसने हल्का सा झूठ बोला और कहा— 'मैं तुम्हारे लिए एक-दो चीज़ें लाया हूं देखूं पूरी आती हैं कि नहीं।'

उसने सूटकेस खोला। एक गरम काली ऊन की शाल थी पर जमी हल्की। मा के कंधों पर डालकर कहने लगा— यह जाड़े की चीज़ है पर एक मिनट अपने ऊपर ओढ़कर दिखाओ। यह तुम्हें बड़ी अच्छी लगेगी।'

फिर उसने फर के स्लीपर निकाले। मा के पैरों में पहनाकर कहने लगा— 'देखो कितने पूरे आए हैं। मुझे डर था छोटे न हों।'

'इस उम्र में मुझे अच्छे लगेंगे ?' मा की आंखों में पानी-सा भर आया था।

वह मा का ध्यान बटाने के लिए और चीज़ें दिखाने लगा। प्लास्टिक की एक छोटी-सी डिब्बी में कुछ सिक्के थे—इटली के लीरा यूगोस्लाविया के दीनार, बलगारिया के लेवा, हंगरी के फारिंटस, रोमानिया के लेई जर्मनी के दीनार उसने सिक्कों को छनकाया और कहने लगा— 'मा, तुमने कहा था न कि छोटे के घर बहुत जल्दी कोई बच्चा '

'हां हां, कहा था' मा कमरे से जाने के लिए उतावली-सी लगी।

"यह अपने भतीजे को दूगा।"

और फिर उसने सूटकेस में से और चीजे निकाली —"छोटे के लिए यह कैमरा, और भाभी के लिए यह···"

मा रुआसी-सी हो गई।

उसका हाथ रुक गया।

"मां, क्या वात है, तुम मुझे वताती क्यों नही ?"

मा चुप थी।

उसने मा के कन्धे पर हाथ रखा।

मा को कोई कही कसूरवार लगता था। पता नही कौन। और सोच-सोचकर उसे अपना मुह ही कसूरवार लगने लगा था। उसने एक विवशता से उसकी तरफ देखा।

"मा, तुम कुछ वताना चाहती हो, पर वताती नही।"

"वह लड़की "

"कौन-सी लडकी ?"

"जो तुझे उस दिन मिलने आई थी, जिसने तेरे लिए एक स्वेटर···"

"हा, क्या हुआ उस लड़की को ?"

"उसने छोटे के साथ व्याह कर लिया है।"

मा के कन्धे पर रखा हुआ उसका हाथ कस-सा गया। एक पल के लिए उसे लगा कि हाथ ने कन्धे का सहारा लिया था पर दूसरे पल लगा कि हाथ ने कन्धे को सहारा दिया था।

और वह हस पडा—"सो वह मेरी भाभी है।"

मां उसके मुंह की तरफ देखने लगी।

"मुझे खत मे क्यो नही लिखा था ?"

"क्या लिखती ··यह उन्होने लिखने वाली वात की थी ?"

"छोटे ने सिर्फ व्याह की खवर दी थी और कुछ नही लिखा था।"

"दोना शरमिन्दे मुझे क्या लिखते।"

खुले सूटकेस के पास जो दूसरा बन्द सूटकेस था, उसपर उसका ओवर कोट और वह स्वेटर पड़ा हुआ था जो उसने सुबह आते वक्त पहना था।

वह एक मिनट स्वेटर की तरफ देखता रहा। स्वेटर गुच्छा-सा होकर अपने आपको ओवर कोट के नीचे छुपाता-सा लग रहा था।

पांच बरस लम्बी सड़क

मेरे हाथ अब मेरे कानो के बचाव के लिए कुछ नही करते। शायद थक गए है, इसलिए। पर मेरे दोस्त ने कानो पर हाथ रख लिए। कहने लगा—"मैंने समझा था ऐसी आवाजें बिल्लीमारा, बत्तियां की गली, और पापड़मंडी में ही आती है···"

मेरे कान मेरे होठो की तरह हस रहे थे ··

"यहा, अफसर लोगो की बस्ती मे भी ऐसा होता है ?" मेरा दोस्त उठकर शीशे की उस खिड़की को बन्द करने लगा, जिसमे से, पडोसियो के घर में से बिल्लीमारां, बत्तियां की गली या पापडमडी के ख्याल जैसा कुछ मेरे कमरे मे आ रहा था।

"एक फर्क शायद तूने नोट नही किया" मैंने इस सरकारी बस्ती को लोगो की साधारण बस्तियो से अलग करने के लिए कहा, "उन बिल्ली-मारा, या जोडेमारा गलियो में जो शोर उठता है वह देसी जबान में होता है, पर इस सरकारी बस्ती के गले में से जो कुछ निकलता है, वह अंग्रेजी में होता है···"

मेरे दोस्त को भी मेरी तरह हंसना पड़ा। कहने लगा—"सो इस-

लिए यह सुपीरियर' गोर है ' और फिर उसने एक फिलासफर जसा मुह बनाकर कहा "यार नेशनल जबान से जो इन्ह इनफीरिएरिटी' का ख्याल आता है तो फिर इटरनेशनल जबान क्यो नहीं बरतते ? '

'इटरनेशनल जबान सिर्फ चुप होती है, तेरा ख्याल है, उन्हे चुप रहना चाहिए ' मुझे पूछना पडा ।

मेरे दोस्त ने एक फिलासफर की तरह सिर हिलाया ।

'बात यह है मुझे कहना पडा, 'इस जबान से इन्सान बनता है पर समाज नही बनता ।'

मेरे दोस्त ने घूरकर मेरी तरफ देखा ।

मैंने उसकी त्योरी को अपनी आखो से उसके माथे पर से हटाया और कहा मेरा ख्याल है, इन्सान को समाज चाहिए पर समाज को इन्सान नही चाहिए इसलिए

'इसलिए मेरे दोस्त ने एक बार मेरी तरफ देखा और फिर एक बार खिडकी के शीशे की तरफ ।

यह समाज की आवाज है, जो शीशे से टकरा रही है ' मुझे हसी आ गई ।

मेरे दोस्त ने अपना एक हाथ माथे पर रखा, पर मुझे लगा जसे उसने माथे पर हाथ मारा हो ।

मैंने बडे धीरज से उसे कहा, ' मैं दूर नहीं जाता, इसी पास के घर की मिसाल देता हू । बहुत बरस नही हुए मुश्किल से पाच बरस हुए हैं यहा एक आदमी रहता था '

कोई और किरायदार ?'

'और नही यही । पर तब यह सिर्फ एक चुपचाप आदमी होता

---

१ ऊच किस्म का

२ हीनता

था "

"फिर ?"

"फिर वही जो मैंने कहा था कि इन्सान को समाज चाहिए···"

"यार, यह समा···" मेरा दोस्त बीच में कुछ बोलने लगा था, पर मैंने कहा, "तव यहा बहुत प्यारी चुप होती थी—घास के रग जैसी हरी-सी चुप, आसमान के रग जैसी नीली-सी चुप, सूरज के रग जैसी सुनहरी-सी चुप, चाद के रग जैसी दूधिया-सी चुप·· "

"यार, तू शायरी करने लगा है · "मेरा दोस्त हस पडा।

"यह मेरा कसूर नही" मैंने कहा। और दोस्त के लगाए इल्जाम का जवाब देते हुए कहने लगा, "मुझे हमेशा चुप में वडे रग दिखते है, अपने जिस्म का वादामी रग भी चुप मे दिखता है, कपडो के शोर मे मुझे वह रग कभी नही दिखता·· पर पता नही इस आदमी को यह सारे रग क्यो नही दिखते थे "

मेरे दोस्त ने फिर फिलासफर-सा मुह वनाया और कहने लगा, "चुप मे दिखने वाला एक रग कब्र का रग भी होता है।"

मुझे हसी आ गई, और मैंने कहा, "फिर मेरा ख्याल है जिन्हे चुप मे यह सारे रग नही दिखते, उन्हे सिर्फ कब्र का रग दिखता है। इस मेरे पडोसी को भी जरूर वही दिखता होगा, तभी वह एक वार छुट्टी लेकर अपने गाव गया था, और जव वापस आया था, उसके साथ एक औरत थी। मुझे याद है, वह दोनो जव यहा पहुचे थे, टैक्सी में से वाते करते उतरे थे···वह शायद मिलकर अपनी-अपनी चुप के कब्र जैसे रग को तोड रहे थे · "

मेरा दोस्त मुस्करा पड़ा। पूछने लगा, "फिर ?"

"मेरा ख्याल है, कुछ दिनो पीछे उन्हे लगा कि छोटी-छोटी वातो से यह रग नही टूट सकता। पहले वे दोनो वडी धीमी आवाज मे वोलते

थे, फिर बहुत ऊंचा-ऊंचा बोलने लगे "

"फिर ?'

फिर मेरा ख्याल है कि दोनों को लगा—आवाजों से कुछ नहीं बनता। आवाजें कंकरों की तरह होती हैं, इनसे चुप नहीं टूटती। सो दोनों ने कुछ पत्थर जैसी चीजें ढूंढीं। मर्द ने गालियों का पत्थर पकड़ लिया औरत ने रोने का।

मेरा दोस्त फिर मुस्कराया, और पूछने लगा, 'फिर ?"

'फिर दोनों ने सोचा कि चुप जैसे दुश्मन के लिए वह दो जने काफी नहीं थे, सो उन्होंने एक तीसरे का भी बन्दोबस्त किया। उनके बच्चे ने जब दिन रात गला फाड़ फाड़कर रोना शुरू किया, तो मेरा ख्याल है उन्हें जरूर कुछ तसल्ली हुई होगी।'

मेरे दोस्त ने मेरे कंधे पर एक हाथ मारा और कहने लगा— यह वास्तव में एक बहुत बड़ा हथियार था।

पर यह हथियार डेढ़ बरस बाद खुंडा हो गया' मैंने जवाब दिया, और बताया कि बच्चे ने रोना कम कर दिया था। 'मेरा ख्याल है उन्हें फिर चुप से डर लगने लगा था। सो उन्होंने दूसरे बच्चे का बन्दोबस्त किया।'

मेरा दोस्त खिलखिलाकर हंस पड़ा। और पूछने लगा, "फिर ?"

फिर क्या कोई और रंग होता तो टूट जाता कब्र का रंग नहीं टूटता। उन्होंने चुप के मुकाबले पर बाकायदा एक भरती शुरू कर दी। पहले एक नौकर रखा फिर एक आया। और बारी बारी दोनों को गालियां देकर दिन रात अपनी चुप को तोड़ते रहे। पर इंसान का गला आखिर इंसान का गला है थक जाता है। सो वे हारकर एक कुत्ता ले आए '

और मैंने कुर्सी पर से उठकर वह खिड़की खोल दी, जो अभी थोड़ी

देर पहले मेरे दोस्त ने घबराकर बन्द कर दी थी।

"एक औरत की, एक मर्द की, दो बच्चो की, दो नौकरों की, और एक कुत्ते की—ये सात आवाज़े हैं। किसी राग के सात स्वरो की तरह।" मैंने अपने दोस्त को कहा और पूछा, "तू पहचान सकता है, यह कौन-सा राग है?"

मेरा दोस्त हस पड़ा। कहने लगा—"समाज राग" और फिर एक फिलासफर जैसा मुह बनाकर कहने लगा, "जिन्दगी की चुप को तोड़ने के लिए यह राग बहुत ज़रूरी है। यह राग···" वह एकदम चुप हो गया, पता नही क्या कहने वाला था।

फिर सात स्वरो को, जो एक बार एक सास में बज रहे थे, कुछ अलग करता हुआ कहने लगा—"यार, यह कमाल है। आदमी शायद सिर्फ अंग्रेजी मे बोल रहा है और औरत कभी अंग्रेजी, कभी देसी ज़बान मे···नौकर सिर्फ पहाडी ज़बान में बोल रहे है ·· "

"चुप के खिलाफ मिलकर जूझना चाहिए" मेरी हसी अब रुआसी हो गई थी। मुश्किल से इतना कहा, "मेरा ख्याल है, यह इटेग्रेशन का एक सेमिनार है सबके सब उस कुत्ते की आवाज़ मे···मेरा मतलब है उसकी हा मे हा मिला रहे है ··"

थे, फिर बहुत ऊंचा-ऊंचा बोलने लगे "

फिर ?"

'फिर मेरा ख्याल है कि दोना का लगा—आवाजो से कुछ नहीं बनता । आवाजें ककरो की तरह होती हैं, इनसे चुप नहीं टूटती । सो दोनो ने कुछ पत्थर जसी चीजें ढूढी । मद ने गालियो का पत्थर पकड लिया, औरत ने रोने का ।

मेरा दोस्त फिर मुस्कराया, और पूछने लगा, फिर ?"

"फिर दोनो ने सोचा कि चुप जैसे दुश्मन के लिए वह दो जने काफी नहीं थे सो उन्होंने एक तीसरे का भी बन्दोबस्त किया । उनके बच्चे ने जब दिन रात गला फाड फाडकर रोना शुरू किया, तो मेरा ख्याल है उन्हे जरूर कुछ तसल्ली हुई होगी ।'

मेरे दोस्त ने मेरे कन्धे पर एक हाथ मारा और कहने लगा—"यह वास्तव मे एक बहुत बडा हथियार था ।

पर यह हथियार डेढ बरस बाद खुडा हो गया, मैंने जवाब दिया और बताया कि बच्चे ने रोना कम कर दिया था । मेरा ख्याल है, उन्हे फिर चुप से डर लगने लगा था । सो उन्होंने दूसरे बच्चे का बन्दोबस्त किया ।'

मेरा दोस्त खिलखिलाकर हस पड़ा । और पूछने लगा, "फिर ?

' फिर क्या, कोई और रग होता तो टूट जाता कब्र का रग नहीं टूटता । उन्होंने चुप के मुकाबले पर बाकायदा एक भरती शुरू कर दी । पहले एक नौकर रखा फिर एक आया । और बारी-बारी दोनो को गालियां देकर दिन रात अपनी चुप को तोडते रहे । पर इन्सान का गला आखिर इन्सान का गला है थक जाता है । सो वे हारकर एक कुत्ता ले आए '

और मैंने कुर्सी पर से उठकर वह खिडकी खोल दी, जो अभी थोडी

देर पहले मेरे दोस्त ने घबराकर बन्द कर दी थी।

"एक औरत की, एक मर्द की, दो बच्चों की, दो नौकरो की, और एक कुत्ते की—ये सात आवाज़े है। किसी राग के सात स्वरो की तरह।" मैंने अपने दोस्त को कहा और पूछा, "तू पहचान सकता है, यह कौन-सा राग है?"

मेरा दोस्त हस पड़ा। कहने लगा—"समाज राग" और फिर एक फिलासफर जैसा मुह बनाकर कहने लगा, "जिन्दगी की चुप को तोडने के लिए यह राग बहुत ज़रूरी है। यह राग···" वह एकदम चुप हो गया, पता नही क्या कहने वाला था।

फिर सात स्वरों को, जो एक बार एक सास में बज रहे थे, कुछ अलग करता हुआ कहने लगा—"यार, यह कमाल है। आदमी शायद सिर्फ अग्रेजी मे बोल रहा है और औरत कभी अग्रेजी, कभी देसी ज़बान मे···नौकर सिर्फ पहाडी ज़बान मे बोल रहे है····"

"चुप के खिलाफ मिलकर जूझना चाहिए" मेरी हसी अब रुआसी हो गई थी। मुश्किल से इतना कहा, "मेरा ख्याल है, यह इटेग्रेशन का एक सेमिनार है सबके सब उस कुत्ते की आवाज मे ··मेरा मतलब है उसकी हा मे हा मिला रहे है ·"

पाँच बरस लम्बी सड़क

अलमारी का खाना बहुत लम्बा था—उसके कद जितना।

वह अपने कोट के बटन खोलने लगा था, उसका हाथ पहले बटन पर ही रुक गया जैसे शीशे के बीच वाले हाथ ने उसका हाथ पकड़ लिया हो।

"कपड़े नहीं बदलोगे?" औरत की आवाज़ आई।

मर्द हँस-सा दिया। शीशे में भी कुछ हिल-सा गया।

'तुमने पिक्चर आफ डोरियन ग्रे पढ़ी है?' मर्द ने पूछा।

'पिक्चर आफ डोरियन ग्रे?

'आस्कर वाइल्ड की सबसे मशहूर उपन्यास।

'मेरा ख्याल है कालेज के दिनों में पढ़ी था पर इस वक्त याद नहीं शायद उसमें एक पेंटिंग की कोई बात थी '

"हाँ, पेंटिंग की। वह एक बड़े हसीन आदमी की पेंटिंग था "

'फिर शायद वह आदमी हसीन नहीं रहा था और उसके साथ ही उसकी पेंटिंग बदल गई थी कुछ ऐसी ही बात थी।"

"नहीं वह उसकी दिखती शक्ल के साथ नहीं बदली थी, उसके मन की हालत में बदली थी। रोज बदलती थी।"

"अब मुझे याद आ गया है। आदमी उसी तरह हसीन रहा था, पर पेंटिग के मुह पर झुरिया पड़ गई थी·· ।"

"उसके मन की सोचो की तरह।"

"अब मुझे सारी कहानी याद आ गई है।"

"मेरा ख्याल है, यह शीशा · "

"यह शीशा ?"

"सामने शीशे में देखो, मेरी शक्ल बदल गई है।"

"आज पार्टी में तुमने बहुत पी थी।"

"नही, बहुत नही, मैं अभी और पीना चाहता हू ··यहा अकेले, इस शीशे के सामने बैठकर · और देखना चाहता हू—यह शक्ल और कितनी बदल सकती है ··"

औरत परे खडी थी, उधर पलग के पास। इधर मर्द के पास आई, शीशे के पास। उसकी आवाज में दिलजोई थी, कहने लगी—"आज की पार्टी मे कोई सबसे हसीन आदमी अगर था, तो वह सिर्फ तुम। तुमने उनकी शक्ले नही देखी ? उन सबकी, जिन्हे तुमने पार्टी पर बुलाया था · वह मास के ढेर से···"

"मैं उनकी बात नही कर रहा सिर्फ अपनी कर रहा हू।"

"हा, देख लो शीशे में—तुम्हारा वही चन्दन की गेली जैसा जिस्म। माथा, आखे ···नाक···जैसे खुदा ने फुर्सत मे बैठकर गढे हो· " औरत ने कहा। वह अभी भी दिलजोई की रौ में थी।

"यह शब्दावली शायरो को लिए रहने दो···" मर्द खीझ-सा गया।

"मेरा ख्याल है तुम थक गए हो। वैसे भी रात आधी होने को है · "

"पर तुम शीशे मे क्यो नही देखती ? देखने से डरती हो ?"

"शीशे मे कुछ और हो जाएगा ?"

"हो जाएगा नही, हो गया है।"

'कहाँ ? कुछ भी नहीं हुआ ''

अभी हुआ था मैंने खुद देखा था मैं जब हँसा था पीने मे मेरा सही मुँह रो पड़ा था यह 'डोरियन ग्रे की पेंटिंग की तरह

मैं गुसलखाने में से नाइट सूट ला देती हूँ, तुम कपड़े बदल लो।'

कपड़े सभ्यता की निशानी होते हैं, इस निशानी के बगैर मैं क्या होऊँगा तुमने ही कहा था कि इस पार्टी के लिए मुझे नया सूट सिल जाना चाहिए '

'मैंने ठीक कहा था वह सब तुमसे बड़े इम्प्रेस हुए लगते थे '

'इसलिए मैं यह सूट उतारना नहीं चाहता।'

'पर अब घर में कोई भी नहीं।'

अभी मैं हूँ

औरत को अब यकीन हो गया था वह कि अब बहक गया है इसलिए बोली नही।

मर्द ने ही कहा—'उस वक्त मैंने उनको इम्प्रेस किया था, पर इस वक्त अपने आपको करना है, इसलिए अभी यह सूट नहीं उतार सकता।'

औरत चुप थी।

कुछ व्हिस्की बची है ? मर्द ने पूछा।

औरत के मुँह पर से एक नाच की परछाइँ गुजर गई। परछाइँ को पसीने की तरह पोंछकर बोली वह—नहीं।'

'मेरा ख्याल है, तुम्हें झूठ बोलने का अभी ढंग नहीं आया।' मर्द हँस दिया।

"पर इस वक्त मैं और नहीं पीने दूँगी।'

"सिर्फ एक गिलास "

'नहीं।"

'तुमने उन्हें किसी गिलास के लिए मना नहीं किया था।

"वे गेस्ट थे···"

"रिस्पेक्टेवल स्रोट···रिस्पेक्टेवल सिर्फ वे थे, मैं नही ?"

"मैंने रिस्पेक्टेवल नही कहा, सिर्फ गेस्ट कहा है,"

'तुम मुझे भी अपना गेस्ट समझ लो···"

'क्या ?"

"यह घर तुम्हारा है, मैं तुम्हारा गेस्ट हूं,"

"यह घर सिर्फ मेरा है ?"

"घर सिर्फ औरत का होता है।"

औरत को इस वक्त कुछ भी कहना ठीक नही लगा। उसे लगा कि इस वक्त सिर्फ सो जाना चाहिए। वह चुपचाप गुसलखाने में गई, और मर्द का नाइट-सूट लाकर, पलग की वाहो पर रख दिया।

मर्द ने कमरे के हल्के नीले आयल पेंट की तरफ देखा, पलग की रेशमी सलेटी चादर की तरफ, फिर टेवल लैम्प के आसमानी शेड की तरफ ·· और उसका जी चाहा, वह औरत से कहे—इस कमरे का सारा कुछ ·वरसो से उसकी कल्पना थी। इस कमरे की भी और वाहर के वडे कमरे की भी ··इस सब कुछ को चाहती वह खुद कहती थी कि उसके दफ्तर से उसे कोई वास्ता नही, पर अपना घर वह अपनी मरज़ी से बनाएगी, घर औरत का होता है···

सिर उसने नाइट-सूट की तरफ देखा। और सिर्फ इतना कहा—"यू आर ए वडरफुल होस्ट ··आई मीन होस्टेस···"[1]

औरत अभी भी चुप थी।

सिर्फ वही कह रहा था—"मेरी मेहरवान, अव एक गिलास व्हिस्की दे दो।"

औरत को लगा कि इस वक्त गिलास वाली वात को टाला

---

१. तुम वहुत अच्छी मेजवान हो ·

नहीं जा सकता। वह बाहर के कमरे म गई और कुछ मिनटा के बाद उसने एक गिलास लाकर मेज पर रख दिया।

'यू भार रीयली ए डालिग।'[1] मद ने हिस्की के पहले नही पर तीसरे घूट के साथ कहा।

औरत को कुछ याद आया—और वह खोल सा गई— मुझे यह शब्द अच्छे नही लगत।'

क्यो?'

आज की पार्टी मे बिल्कुल यही शब्द तुम्हारे एक मेहमान ने तुम्हारी सेक्रेटरी को कहे थे।

पर वह नाराज नही हुई थी।

वह सेक्रेटरी है मैं बीवी हू।

'यह फर्क कसा लगता है?

डिसगस्टिंग[2]।

'डिसगस्टिंग बीवी होना या कि सेक्रेटरी होना'

मेरे ख्याल म सेक्रेटरी होना।

यू भार राइट।

मद ने हिस्की का घूट भरा और कहने लगा, एक मरिड भ्रारत की पोजीशन सचमुच बडी शानदार होती है। वह जब चाहे नाराज हो सकती है। जिस बात पर और जब चाहे पर बेचारी सेक्रेटरी

इस तज का मतलब?

'यह तज नही।

फिर यह क्या है?

एक फक्ट।'

---

१ तुम सच में प्रिय हो।
२ घृणित

"उससे बडी हमदर्दी है ?"

"उसके साथ नही, सिर्फ उसके सेक्रेटरी होने से ।"

"इसीलिए उसकी हर दूसरे महीने तरक्की हो जाती है ?"

"यह तरक्की नही डियर, यह रिश्वत है । सिर्फ यह रिश्वत का नया तरीका है ।"

"किस चीज की रिश्वत ?"

"हमारी एजेन्सी को जिस सेठ ने अपने मिल का एडवरटाइजिंग एकाउट दिया है, यह उसकी शर्त थी···उस लडकी की तरक्की भी उसी की शर्त है···"

"यह उस सेठ की···"

"ए कैप्ट विमैन ।"[1]

"इट इज आल डिस्गस्टिग ?"[2]

"येस, इट इज आल डिस्गस्टिग ।"

"पर तुम्हे उससे हमदर्दी किस बात की है ?"

"क्योकि मै उसका हमपेशा हू ।"

"क्या मतलब ?"

"हम सब·· सब···उसके हमपेशा है···"

"किस तरह ?"

"वी आर नॉट मैरिड टु अवर वर्क···वी आर आल लाइक कैप्ट विमैन ··"[3] मर्द हसा फिर कहने लगा—"आज की पार्टी से भी यह जाहिर था । मैंने उनको खुश करने के लिए यह सब कुछ किया था । पाच लाख एक साल के बिजनेस का सवाल था ·"

१. रखैल

२. यह सब बडा घृणित है ।

३. हमारी शादी अपने काम से नही हुई है ·हम सब रखैलों की तरह है ।

मर्द ने व्हिस्की के गिलास का आखिरी घूंट भरा, शीशे की तरफ देखा। पता नहीं उसे क्या नज़र आया उसने एक बार आंखें बन्द-सी कर ली। फिर दोनों ही वे उस शीशे की तरफ नहीं, खाली गिलास की तरफ देख रही थीं।

'मेरी मेहरबान, एक गिलास और।

"नहीं, और नहीं।"

'आज जाने-गुलामी है।'

औरत ने अपनी घबराहट को माथे पर से पसीने की तरह पोंछा।

'देख मेरी जान आज की पार्टी ने अगले साल का बिजनेस भी पक्का कर दिया है। इसका मतलब है—अगले साल भी पांच लाख का बिजनेस। इसलिए मैंने नया सूट पहना था वे औरतें मेरा मतलब है क्लाइन्ट विमन इसी तरह नई साड़ी पहनती हैं फिर सारा वक्त दिल फरेब बातें उन्हें किसी भी बात से नाराज़ होने का हक नहीं होता मैं भी किसी बात से नाराज़ नहीं हुआ '

औरत ने मर्द के पास होकर उसके कोट के बटन खोले। बटन खोलते हुए वह काफी देर तक उसकी छाती के पास खड़ी रही। शायद मर्द के हाथ की किसी हरकत का इन्तज़ार कर रही थी

रात कमरे में भी अडोल थी दूर परे तक भी अडोल थी। मर्द के अंगों की तरह।

और फिर अचानक एक कुत्ते के भौंकने की आवाज़ आई। और औरत को लगा—उसकी छाती में भी कुछ था जो इस वक्त

कुत्ते के भौंकने की आवाज़ बायें हाथ वाली कोठी की तरफ से आई थी। फिर अगले मिनट दायें हाथ वाली कोठी की तरफ से भी आई। शायद जवाब की सूरत में।

'व्हाट ए डुइट ' मर्द ने खाली गिलास की तरफ देखा, और औरत

को हाथ से परे करता हुआ, वाहर के कमरे में से और व्हिस्की लाने के लिए चला गया।

गिलास मे वर्फ का एक टुकडा शायद उसने ऊपर से और डाला था, गिलास छलक-सा गया था। गिलास को छलकने से बचाने के लिए उसने दहलीज ही मे खडे होकर एक घूट भरा, और फिर कमरे में आता हुआ कहने लगा—"आई एम सैलीव्रेटिंग दिस डुइट।"[1]

कुत्ते भौक रहे थे—वारी-वारी।

"दिस इज़ फार द हेल्थ आफ डॉग्ज़···[2]

उसने गिलास में से एक घूट भरा।

औरत ने घबराकर पहले कमरे की बाईं दीवार की तरफ देखा, और फिर दाईं की तरफ। वाहर भौकते कुत्तो की आवाजो मे से, एक आवाज़ वाईं दीवार से टकरा रही थी, एक दाईं से।

"रात को सिर्फ डुइट होता है।" मर्द हस-सा पडा और कहने लगा, "पर सवेरे पूरा कोरस होता है। वाये हाथ वालो कोठी में कोई अमरीकन है। उसके सारे कमरे एअरकडीशड है, इसलिए उसे कोई फर्क नही पडता, पर सुवह के वक्त उसका खानसामा, उसका वैरा, और कोठी का जमादार, जिस तरह एक-दूसरे पर भौकते है, लगता है कोठी मे एक नहीं पूरे चार कुत्ते भौक रहे हैं · "

"डार्लिंग, तुम सोने की कोशिश क्यो नही करते ?" औरत ने, थक गई औरत ने, कहा।

"आई एम ड्रिंकिग फार दी हेल्थ आफ डाग्ज़ ··"

औरत चुप-सी पलग की वाही पर वैठ गई।

"तुमने मेरी पूरी वात नही सुनी। मै तुम्हे वता रहा था सुवह,

---

१. मै इस युगलगान का जश्न मना रहा हू।

२. यह जाम कुत्तों की सेहत के लिए।

कर खडा हो गया। फिर शीशे के सामने आया—"देख सामने। यह मैं बूटो के तसमे खोलता हू, इसमे देख किसके पैर है—माई गाड। निरे उस सेठ के पैर यह शीशा आज डोरियन ग्रे की पेंटिग की तरह ··"

"इस वरस यह एक सेठ के पैर हैं, पिछले वरस यह जरूर एक वैकर के पैर होगे। पिछले वरस मैंने यह शीशा नही देखा था। इस तरह नही देखा था ··और उससे पिछले वरस···" मर्द ने एक वार बौखलाकर औरत की तरफ देखा, और पूछा, "कितने वरस हुए हैं ? जिस वरस मैंने तुम्हारे साथ व्याह किया था, उसी वरस ·"

"सिर्फ पाच वरस···" औरत ने धीरे से कहा।

"और सिर्फ पाच वरसो मे मेरी शक्ल वदल गई है ? और पाच मे या और पाच मे यह शक्ल ··"

"तुम्हारी शक्ल उसी तरह है।" औरत ने कहना चाहा। पर कहा नहीं। पहले भी वह यह वात कह चुकी थी। कोई फर्क नही पडा था।

"तुम चुप क्यो हो ?" मर्द ने अचानक पूछा।

औरत फिर भी नही वोली।

"व्हाई डोंट यू वार्क लाइक ए डॉग "[1]

औरत के मन मे एक वचैनी-सी हुई। उसे लगा कि वह सचमुच कुछ कहना चाहती थी—कहना नही, एक कुत्ते की तरह···और औरत ने अपनी छाती पर एक हाथ रख लिया। उसे लगा, उसका छाती धौंक रही थी।

"तुम अव भी चुप हो, उस वक्त भी चुप थी···" अचानक मर्द ने कहा।

"उस वक्त ? किस वक्त ?" औरत चौक-सी गई।

मर्द फिर हस-सा पडा। कहने लगा—"तुम्हारा ख्याल है, मैंने देखा नही था ? जिस वक्त उस सेठ ने तुमसे हाथ मिलाया था, कहा था, 'थैंक

१. तुम कुत्ते की तरह क्यों नही भोंकते

यू मैडम ' 'और उसने तुम्हारा हाथ भींचा था तुम्हारी तरफ देखते हुए उसकी नजर एक शिकारी कुत्ते की तरह ''

औरत कुछ देर मर्द की तरफ देखती रही, फिर कहने लगी— एक हमारे पहले घर की पड़ोसिन थी, उसका मर्द आए दिन घर मे एक नई औरत लाता था। वह हमेशा चुप रहती थी। मुझे भी कुछ ऐसा ही लगा था उस बात का इस बात से कोई सम्बन्ध नही पर फिर भी कुछ इसी तरह लगा था मैंने सोचा मेरे कुछ बोलने से तुम्हारा कारोबार

औरत ने आँखों में आए हुए पानी को पसीने की तरह पोंछा।

'मैं भी चुप रहा था' मर्द ने कहा और मेज पर रखा हुआ गिलास फिर हाथ में पकड़ लिया। गिलास को आखिरी घूंट तक पीता हुआ कहने लगा— 'इट इज फार आल द डॉग्ज— द मैड वन्स द हंटिंग वन्स द बार्किंग वन्स ऐंड ' मर्द ने पहले मुसकराकर औरत की तरफ देखा, फिर धीमे में और कहा— 'ऐंड द साइलेंट वन्स '

---

१ यह जाम सारे कुत्तों के लिए है पागल कुत्तों के लिए शिकार करने वाले कुत्तों के लिए भौंकने वाले कुत्तों के लिए और

२ और उन कुत्तों के लिए जो चुप रहते हैं

पांच बरस लम्बी सड़क

उसे अपनी छाती में शहद का एक छत्ता-सा लगा हुआ लगता। उसकी सोचें शहद की मक्खियों की तरह उडती, वडे अजीव फूलो को सूघती, और वडा अजीव शहद जोडती।

कई वार वह हाथ मारकर सोचो को उडाता, उनका जोडा हुआ शहद पीता। पर कई वार उसकी सोच की कोई मक्खी उसके अपने ही हाथ पर काट लेती। वह एक हाथ से दूसरे हाथ में से मक्खी का डक निकालता रहता।

पर कई डक वहुत गहरे होते है। हाथ को सूजन चढती जाती है, डक नही निकलता। पिछले दिनो मे एक ऐसा ही डक, उसे वहुत दिनो तक दुखी करता रहा था—मायकोवस्की ने सुसाइड क्यो किया?

मायकोवस्की की नज़्मो का शहद पीते हुए, एक दिन अचानक उसे इस सोच ने डक मार दिया था।

इस तरह की एक सोच ने उसे जर्मनी में भी डक मारा था—एक गैलरी मे उसने सुभाषचन्द्र वोस की आदमकद तस्वीर देखी थी, और उसकी आखे तड़पकर सूजने लगी थी—सुभाषचन्द्र वोस आज जीता

क्या नहीं ?

आज भी उसके हाथ पर एक सूजन चढ रही थी कि आखिर अपने कमरे की एक चाबी उसने एक लडकी को क्यो दी हुई थी ?

इस एक मक्खी का डक उसने कई बार खाया था, बहुत बरस हुए जब उसने अपने कमरे की एक चाबी उस लडकी को दी थी।

उस दिन वह एक नज्म पढ रहा था उसके दफ्तर म काम करन वाली एक लडकी उसका दरवाजा खटकाकर उसस कोई किताब मागने आइ थी पहले भी आती थी पर उस दिन उसने उस लडकी को वह नज्म सुनाई थी—

क्या मैं ब्याह कर लू ? क्या मैं अच्छा बन जाऊ ? अचानक उसने नज्म की पहली पक्ति पढी थी। लडकी कीली हुई सी खडी रह गई थी। और उसने आग नज्म पढी थी सबसे नजदीक एक पडोसिन लडकी है एक दिन मैं उसे कहूगा कि वह कुछ महसूस करे क्योकि कुछ महसूस करना एक अच्छी बात है फिर वह मुझे अपने मा बाप स परिचित करवाने क लिए ल जाएगी। उस दिन मैं अच्छी तरह बाल सवारूगा टाई से गल को घोटूगा और एक अजनबी कमरे म जाकर एक पुरान सोफे पर बठ जाऊगा और फिर सारा कुटुम्ब मरी तरफ दखेगा और सोच विचार करगा

उस नज्म को सुनती हुई लडकी ने कुछ नही कहा था। सिफ हस दी थी। वह नज्म पढता रहा था फिर मा बाप कहगे अच्छा तू हमारी बेटी से ब्याह कर ले हम बेटी गवा नही रहे हैं बल्कि एक बेटा पा रहे हैं। और फिर वह ब्याह रचाया जाएगा।

'फिर ? नज्म को सुनते हुए लडकी ने कहा था।

'फिर सब बडे-बूढे इकटठे हो जाएगे, और फिर सबकी आखें खाने

की मेज की तरफ घूरेगी। बडे पकवानो की खुशबू उनके नथनो मे घुसेगी, और शराब के इन्तजार मे वह होठो पर जीभ फेरेगे···"

नज्म सुनती हुई लड़की हस पडी थी, और उसने पूछा था—"फिर ?"

"फिर पादरी मेरी तरफ देखेगा, सोच रहा होगा कि आज तक यह आदमी एक औरत के जिस्म के बिना कैसे दिन गुजारता होगा, और फिर मुझसे कहेगा, 'तुम अब से इस औरत का जिस्म कानूनी तौर से बरत सकते हो ' "

नज्म सुनती हुई लडकी ने कहा कुछ नही था, सिर्फ हुकारा-सा भरा था।

उसने मेज की तरफ हाथ करके पैकेट मे से एक सिगरेट निकाला था और उसे जलाकर नज्म पढने लगा था—"फिर मैं ब्राइड को चूमने के लिए आगे बढूगा, ऐसे, जैसे कमरे के कोनो मे खड़े लोगो ने मुझे धक्का देकर आगे कर दिया हो·· "

नज्म की अगली पक्तिया उससे जल्दी से अनूदित नही हुई थी, उसने उसी तरह पढ दी थी, "ऐड इन देयर आइज यू कुड सी सम औब-सीन हनीमून गोइग आन···"[1]

नज्म सुनती हुई लडकी की काली आखो मे एक ग्लानि-सी आई थी और उसे नज्म सुनाते हुए लगा था कि यह नज्म उस लडकी को नही सुनानी चाहिए थी। वह हाथ मे पकडी हुई किताब को मेज पर रखने लगा था, जिस वक्त लडकी ने जोर देकर कहा था कि वह सारी नज्म सुनना चाहती है। और उसको लगा कि काली आखो मे भी वह ग्लानि थी, जो नज्म में मर्द की भूरी आखो मे थी। इसलिए वह नज्म आगे पढने लगा था·

१· और उनकी आखों में तुम अश्लील हनीमून मनाया जाता देख सकोगे· ·

'फिर नियागरा फाल के किनारे पर हनीमून मनाने जाऊगा। सब वहा जाते ह। होटल क सब कमरा म सिर्फ शाविद बीविया और फल तथा चाकलेट होते हैं। और सब उस रात एक सी ही बात करते है। होटल के कलकों को भी पता होता है कि सब अपने कमरा म उस रात '

नज़्म सुनती हुई लडकी खिलखिलाकर हस पडी थी 'ए वल रिटन पोयम!' उसने कहा था और किताब के पास झुककर उस नज़्म क शायर का नाम पढा था—ग्रेगरी कारसो।

लडकी की समझ पर उसका अविश्वास कुछ विश्वास बन गया था और वह आगे नज़्म पढ़ने लगा था 'और फिर होटल क कलक की आखा म देखता मैं चीख सा पड़ूगा—यह हनीमून मुझसे नही होगा। और मैं नियागरा फाल क नीचे काली गुफा म घुस जाऊगा। मैं एक मड हनीमूनर। और गुफा म बैठकर मैं इस ब्याह को तोडने की तरकीब सोचूगा। एक समाधि सी लगाऊगा—म ए सैंट ग्राफ डाइवोर्स।

लडकी बहुत ध्यान स नज़्म सुन रही थी। उसने लडकी स मजाक किया—'वोंट यू लाइक टु वरशिप ए सेंट ग्राफ डाइवोर्स?'[1]

लडकी हस दी थी। जवाब में उसने एक अधूरा सा वाक्य भी कहा था आई थिंक आई एम मालगेडा[2] पर फिर उसने वाक्य की तरफ स ध्यान हटाकर नज़्म की तरफ कर लिया था और कहा था—आग नज़्म सुनाओ

वह नज़्म सुनाने लगा था पर मुझे ब्याह करना चाहिए एक अच्छा आदमी बनना चाहिए। यह कितना अच्छा होगा जब मैं शाम का घर लौटूगा आग तापूगा मेरे कमरे की खिड़की बाहर खेतो की ओर नहा खुलेगी, मैं शहर की किसी इमारत की सातवीं मंजिल क एक छोटे

---

१ तुम तलाक क सत का पूजा करना नहीं चाहोगे?

२ मेरा ख्याल है मैं पहल हा

और वदवूदार कमरे मे वैठूगा, और मेरी वीवी आलू छीलती हुई कोई अच्छी नौकरी ढूढने को कह रही होगी···मेरे वच्चे नाक पोछ रहे होगे और मेरे वूढे पडोसी मेरे कमरे मे टेलीवीजन देखने के लिए आ रहे होगे···"

यह नज्म सुनती हुई लडकी हसी से दोहरी-सी हो गई थी। और उसने आगे नज्म पढी थी, "नही, मैं व्याह नही कर सकता, कभी भी नही करूगा पर यह भी तो हो सकता है कि मेरा व्याह किसी वडी अमीरजादी के साथ हो जाए और नाजुक-सी, पीली-सी लडकी, काले दस्ताने पहनकर, मेरे साथ शहर की सवसे ऊची इमारत पर खडी, सिगरेट पीती रहे, और सारे शहर का दृश्य देखती रहे। पर नही। मैं उस खिडकी मे नही खडा हो सकता जहा सपने कैद होते है · "

उसने देखा—नज्म सुनती हुई लडकी का चेहरा वडा सजीव-सा हो गया था। गम्भीर भी। इसीलिए उसने नज्म जारी रखी थी, "पर मुहव्वत वाली वात तो मै भूल ही गया। यह नही कि मुझमे इश्क करने की हिम्मत नही, पर मुझे पता है कि इश्क को कुछ दिनो वाद टूटी हुई जूती की तरह घसीटना पडता है ·"

उसको लगा कि नज्म सुनती हुई लडकी का मुह कुछ पीला हो गया था। उसे हमी-सी आई और उसने आगे नज्म पढी, "पर यह भी क्या हुआ कि मैं सारी उम्र अकेला एक कमरे मे वैठा हुआ वूढा हो जाऊ, और सारी दुनिया व्याही जाए, और एक अकेला मैं ही कुआरा रह जाऊ मेरा ख्याल है, दुनिया मे कही एक मेरे योग्य औरत का अस्तित्व भी सभव है, इसी तरह जैसे मेरा अपना सम्भव हुआ है। मै सिर्फ उसके साथ व्याह करूगा। वह उस 'शी' की तरह होगी जो दो हज़ार वरस तक अपने इजिप्शियन आशिक का इन्तजार करती रही ··"

नज्म सुनती हुई लडकी ने हाथ आगे करके उससे किताव मागी थी।

'फिर नियागरा फाल के किनारे पर हनीमून मनाने जाऊगा। सब वहा जाते है। होटल के सब कमरो म सिर्फ खाविन्द बीविया और फल तथा चाकलेट होते है। और सब उस रात एक सी ही बात करते है। होटल के क्लर्कों को भी पता होता है कि सब अपने कमरो म उस रात

नज़म सुनती हुई लडकी खिलखिलाकर हस पडी थी 'ए वेल रिटन पोयम!' उसने कहा था और किताब के पास झुककर उस नज़म के शायर का नाम पढा था—'ग्रेगरी कोरसो।

लडकी की समझ पर उसका अविश्वास कुछ विश्वास बन गया था, और वह आगे नज़म पढने लगा था, 'और फिर होटल के क्लर्क की आखो म देखता मैं चीख-सा पडूगा—यह हनीमून मुझसे नहीं होगा। और मैं नियागरा फाल के नीचे काली गुफा म घुस जाऊगा। मैं, एक मैड हनीमूनर। और गुफा म बैठकर मैं इस ब्याह को तोडने की तरकीब सोचूगा। एक समाधि सी लगाऊगा—मैं ए सेंट आफ डाइवोर्स।

लडकी बहुत ध्यान से नज़म सुन रही थी। उसने लडकी से मज़ाक किया—'डोंट यू लाइक टु बरशिप ए सेंट आफ डाइवोर्स?'[1]

लडकी हस दी थी। जवाब म उसने एक अधूरा-सा वाक्य भी कहा था 'आई थिंक आई एम आलरेडी '[2] पर फिर उसने वाक्य की तरफ से ध्यान हटाकर नज़म की तरफ कर लिया था और कहा था—आगे नज़म सुनाओ।

वह नज़म सुनाने लगा था 'पर मुझे ब्याह करना चाहिए एक अच्छा आदमी बनना चाहिए। यह कितना अच्छा होगा जब मैं शाम को घर लौटूगा आग तापूगा मेरे कमरे की खिडकी बाहर खेतों की ओर खुले, सुनती मैं शहर की किसी इमारत की सातवीं मज़िल के एक छोटे

[1] तुम तलाक के संत की पूजा करना नहीं चाहोगी?
[2] मेरा ख्याल है मैं पहले ही

और वदवूदार कमरे में वैठूगा, और मेरी वीवी आलू छीलती हुई कोई अच्छी नौकरी ढूढने को कह रही होगी· ·मेरे वच्चे नाक पोछ रहे होगे और मेरे वूढे पडोसी मेरे कमरे मे टेलीवीजन देखने के लिए आ रहे होगे·· ''

यह नज्म सुनती हुई लडकी हसी से दोहरी-सी हो गई थी। और उसने आगे नज्म पढी थी, "नही, मै व्याह नही कर सकता, कभी भी नही करूगा पर यह भी तो हो सकता है कि मेरा व्याह किसी वडी अमीरजादी के साथ हो जाए और नाजुक-सी, पीली-सी लडकी, काले दस्ताने पहनकर, मेरे साथ शहर की सवसे ऊची इमारत पर खडी, सिगरेट पीनी रहे, और सारे शहर का दृश्य देखती रहे। पर नही। मै उस खिडकी मे नही खडा हो सकता जहा सपने कैद होते है · ''

उसने देखा—नज्म सुनती हुई लडकी का चेहरा वडा सजीव-सा हो गया था। गम्भीर भी। इसीलिए उसने नज्म जारी रखी थी, "पर मुहव्वत वाली वात तो ,मैं भूल ही गया। यह नही कि मुझमे इश्क करने की हिम्मत नही, पर मुझे पता है कि इश्क को कुछ दिनो वाद टूटी हुई जूती की तरह घसीटना पडता है ·"

उसको लगा कि नज्म सुनती हुई लडकी का मुह कुछ पीला हो गया था। उसे हसी-सी आई और उसने आगे नज्म पढी, "पर यह भी क्या हुआ कि मै सारी उम्र अकेला एक कमरे मे वैठा हुआ वूढा हो जाऊ, और सारी दुनिया व्याही जाए, और एक अकेला मै ही कुआरा रह जाऊ मेरा ख्याल है, दुनिया में कही एक मेरे योग्य औरत का अस्तित्व भी सभव है, इसी तरह जैसे मेरा अपना सम्भव हुआ है। मै सिर्फ उसके साथ व्याह करूगा। वह उस 'शी' की तरह होगी जो दो हजार वरस तक अपने इजिप्शियन आशिक का इन्तजार करती रही···''

नज्म सुनती हुई लड़की ने हाथ आगे करके उससे किताव मागी थी।

उसने किताब दे दी थी।

'ग्रेगरी कारसो ने पता नही यह नज्म किसके बारे मे लिखी ?' लडकी ने कहा था।

'जरूर अपने बारे म लिखी होगी।' उसन जवाब दिया था।

"यह भी तो हो सकता है, तुम्हारे बार म लिखी हो लडकी अचानक हस पडी थी।

उसे भी हसना पडा था। और उसन कहा था— आई टेक दट ऐज ए कम्प्लीमेंट। [1]

कम्प्लीमट तो है पर क्या फायदा ? लडकी ने एक अतर सा दिखाया था और पूछा था इस नज्म का पात्र बनना ? कि वह इंजिनियर ?'

'सिफ नज्म का पात्र। उसन जवाब दिया था।

'पर वह इजिनियर क्यो नही ? ' लडकी न फिर सवाल किया था।

वह हस दिया था और उसन कहा था वह इजिनियर सिफ एसा कोइ व्यक्ति बन सकता है जिसका कोइ भी दो हजार बरस स इत जार कर रही हो।

लडकी चुप सी हो गइ थी फिर उसने कहा, 'आई एम दट वन।' [2]

इसपर वह हस दिया था। उसे लगा था कि एसी बातो को सिफ हसकर गवाया जा सकता है। और उसन कहा था 'इफ यू आर दट वन, आई नल टाइ माई बस्ट टु बी दैट इंजिनियर।' [3]

लडकी वह किताब पढना चाहती थी इसलिए उसन वह किताब दे

---

१ म इस अपना तारीफ मानता हू।

२ म हो वह औरत हू।

३ अगर तुम वह औरत हो तो म भी वह इंजिनियर बनने की पूरा कोशिश करूंगा।

दी थी। पर वह अभी और भी किताबे देख रही थी, इसलिए उसने अपने कमरे की दूसरी चावी उसे दे दी थी। कहा था—"मै अगले हफ्ते एक महीने की छुट्टी पर जा रहा हू, तुम पीछे जब तुम्हारा जी चाहे कमरा खोल लेना, और किताबे देख लेना "

उस दिन जब वह लडकी चली गई थी तो वह कुछ पछता-सा गया था। उसको लगा था कि उसे अपने कमरे की चावी उस लडकी को नही देनी चाहिए थी।

इस बात को कोई पाच बरस हो गए थे पर उसने आज तक उस लडकी से कमरे की चावी वापस नही मागी थी।

"आखिर अपने कमरे की एक चावी मैंने उस लडकी को क्यो दे रखी है?" आज उसकी इस सोच ने उसे पता नही कैसा डक मारा था, उसने उठकर काफी का एक प्याला बनाना चाहा, पर उसमे पानी गरम करने और उसमे काफी घोलने की हिम्मत न हुई। उसके हाथ सूज रहे थे। उसने आधी-पौनी रात के अधेरे मे उठकर समुद्र के किनारे जाना चाहा, समुद्र का किनारा उसके कमरे से दूर नही था, पर उसके पैर नही हिले थे, उसके पैर सूज रहे थे। और हारकर उसने अपना ध्यान किसी और तरफ लगाना चाहा। वह भी नही हुआ, जैसे उसका ध्यान भी सूजता जा रहा था।

आज की सोच पता नही कैसा डक मार गई थी

'सोच की मक्खी डक मारती है, पर शहद भी जोडती है' उसे ख्याल आया, और वह उस लडकी से अपने परिचय के बरसो को ऐसे सोचने लगा, जैसे वह शहद की बूदो और मक्खियो के डको को अलग-अलग कर रहा हो।

मगर पहले मुझे उस लडकी का मुह नहीं दिखा था, उसकी आवाज सुनाई दिया था उस याद आया। उसके दफ्तर म ज्यादातर एग्लोइडियन लडकिया थी, कुछ गुजराती भी थी, पर पजाबी कोई नहा था। वह जब स यहा बम्बइ आया था दूसरी जबान बालता थक गया था। दफ्तर म अग्रजी और हिदी स माथा मारना पडता था उसने शौक शौक म गुजराती भी सीख ली थी। पर कभी वह अपनी जबान मे कुछ कहने का और सुनन का तरस जाता था। और फिर एक दिन उसन उस लडकी की आवाज सुनी

फिर शायद आवाज का मोह उसे होठो के माह तक ल गया था

उसन बिस्तर मे से उठकर कमरे की खिडकी खोली, और बाहर क अधेर का एसे देखन लगा जस बीते हुए बरसो का सडक बाहर के अधेर म स गुजर रही हा

सडक वही की वही रहती है सिफ राही गुजर जात है 'उसे हसी सा आ गई और उस लगा राहा भा सिफ चलत हैं पहुचत कहा नहीं—जस अपन कानो से लेकर किसीकी आवाज तक, फिर आवाज से लकर होंठा तक फिर होठा से लकर कुछ और अगा तक, और फिर—उसस आगे वापस उनक अपने कान आ जाते हैं प्यासे और अधेरे की तरफ देखन किसी आवाज का इन्तजार करत शायद धरती का तरह मन क सफर वाली सडक भी गोल होती है अपने स चलती है अपने तक पहुचती है और फिर अपने स चलती है

उस अपने बचपन की एक बात याद आई—उसकी मा जब चूल्हे क पास बठकर राटी पकाती था वह चिमटे स आग की लपट को पकडन की कोशिश करता था। मा कहती थी—' चिमटे स जलता हुआ कोयला ता पकडा जा सकता है, पर आग की लपट नहीं पकडी जा सकती।

पर वह कोयले को नही, आग की लपट को पकडना चाहता था··

उसको लगा—हर एक जिस्म बुझे हुए, या जलते हुए कोयले की तरह होता है। और उसने जब भी, और जहा भी किसी लडकी के जिस्म को छुआ था, एक बुझे हुए या जलते हुए कोयले को पकडा था—उसने आग की लपट को कभी पकड़कर नही देखा था· ·

पर वह कोयले को नही, आग की लपट को पकडना चाहता था, और यह बात उसने उस लड़की को भी बताई थी।

उसने वह 'शी' होने का दावा किया था, जो दो हजार वरस से अपने इजिप्शियन लवर की इन्तजार कर रही थी · इसीलिए एक वार उसे यह वात वतानी पड़ी थी · और उसे याद आया, उसने यह वात सिर्फ उस लडकी को नही वताई थी, एक वार उसने यह वात एक जर्मन लडकी को भी वताई थी—वह जव पिछले साल दफ्तर की तरफ से एक साल के लिए जर्मनी गया था ··

'उस रात मैं वहुत अकेला था·· एकाकीपन पत्थर जैसा ठोस नही था·· पानी की तरह पिघला हुआ था · '

'सिर्फ पानी की तरह ही नही कि मैं टखनो तक, घुटनो तक भीगता उसके वीच मे से गुज़र जाता· वह कुछ गाढी, कुछ पतली एक दलदल की तरह मुझे अपने मे खीच रहा था· डुवो रहा था···उस लडकी के वदन को मैंने एक किनारे की तरह हाथ डाला था·· पर उसके भूरे वाल · ' उसका जिस्म कांप-सा गया, और उसे याद आया, एक वार आखे वन्द करके, और फिर खोलकर जव उसने उस लडकी के वालो की तरफ देखा था तो अचानक वह भूरे नही रहे थे, काले हो गए थे· ·

'यह क्या था ?' वह कई दिन सोचता रहा था। वह भूरे वालो वाली लड़की, एक पल के लिए काले वालो वाली लडकी क्यो वन गई

किसी भी लडकी से नही कह रहा था।

'इट इज माई ओन सेल्फ', हू एंटड माइ हाट लाइक ए ब्लो आफ नाइफ उसने खिडकी म से बाहर आसमान की तरफ देखा, और ऐसी ऊची आवाज मे कहा, जैसे वह बात उसने बादलेयर को सुनाई हो।

आसमान चुप था। सिफ कमरे का दरवाजा धीमे से बोला।

उसने दरवाज की तरफ देखा—वह लडकी चाबी म दरवाजा खोलकर धीरे से कमरे म आ गई थी। चाबी अभी उसके हाथ मे था।

"इजट इट टू अर्ली टु कम ?"[2] उसन पहले लडकी की तरफ देखा फिर खिडकी से बाहर आसमान की तरफ। उजाला अभी मुश्किल से फूटा ही था।

"आई एम एफ्रड " लडकी की आवाज डोल भी गई और सभली भी और उसन कहा 'आई एम एफ्रेड इट इज टू लेट ! "

उसन फिर कुछ नहीं कहा।

लडकी जहा खडी थी, दरवाजे के पास, वही खडी रही। शायद उसे लग रहा था कि वह जहा से चलकर इस कमरे तक आई थी, वह राह चलना उसके बस मे था पर अब अगली चुप को पार करना उसके बस म नही था

उसन हाथ म पकडे हुए काफी क प्याले को मेज पर रख दिया। कुछ कहना उसे स्वाभाविक नहीं लग रहा था, पर यह चुप भी उसे स्वाभाविक नहा लग रही थी। इसलिए उसने कहा, 'तुम बठो मैं

---

१ यह मेरा अपना आप है।

२ तुम क्या जल्दी नहीं आ गई ?

३ मेरा ख्याल है, बहुत देर हो चुकी है।

तुम्हारे लिए कॉफी का एक प्याला वना दू ।"

लडकी ने इनकार मे सिर हिलाया । उसके होंठ कुछ फडके, "पहले तुम हमेशा मुझे कॉफी वनाने के लिए कहते थे, आज···" पर यह आवाज नही आई। होठ एक वार हिले और फिर भिच गए।

चावी अभी भी लडकी के हाथ मे थी।

"यह चावी···" उसने एक वार लडकी की तरफ देखा, एक वार चावी की तरफ, और फिर कुछ कहना चाहकर भी नही कहा ।

"चावी को हाथ मे पकडकर नही आई, चावी का हाथ पकडकर आई हू" लडकी ने कहा। वड़ी सभली हुई आवाज में। शायद उसे अव लग रहा था कि अगर वह एक लम्वी राह चलकर इस कमरे तक आ सकती थी, तो अगली चुप को भी लाघ सकती थी।

लडकी के और उसके वीच, आधे कमरे का फासला था। लड़की के मुह पर इस राह को झेलने की एक पीडा थी। पर यह राह उसे पार करनी थी—यह शायद पाच वरसो की सडक के आगे अचानक टूट गई सडक की राह थी

वह उसके पास आई। और वहुत नजदीक पहुचकर उसने अपने सिर को उसकी छाती से ऐसे लगाया—जैसे यहा तक पहुचते-पहुचते वह वहुत थक गई थी।

उसने पास रखे मेज की तरफ हाथ वढ़ाया और एक सिगरेट पकड़ा। सिगरेट को जलाने लगा था कि लड़की ने उसका हाथ पकड़ लिया।

लडकी ने कहा कुछ नही, पर उसके होठो पर जो कुछ था उसे वह सुन सकता था।

पहले वह जव भी सिगरेट जलाता था, वह उसका हाथ पकड लेती थी। कहा करती थी "निकोटीन पीनी है ? मेरे होठो मे भी निकोटीन

है।

आज लडकी ने सिफ हाथ पकडा था, कहा कुछ नहीं था। पर जो कुछ उसने कहा नही था उस वह सुन सकता था।

उसे हसी सी आ गई कहन लगा—"मेरा ख्याल है, मेरे लिए सिगरट की निकोटीन ही काफी है।

लडकी क होठो म स नही छाती म से एक नि श्वास निकला—तुम मुझे कभी माफ नही करोगे ?

'तुमने कोई कसूर किया है मैंने यह कभी नही साचा। उसन जवाब दिया।

पर तुम जाने से पहले जा थे, आकर वह नहीं रह। तुम्हार पीछे जा कुछ हुआ था वह सिफ तुम्हे बताना था बता दिया। पर तुम उस दिन स वह नहा। लडकी का आवाज बहुत थकी हुई थी। एक गहरा सा सास लेकर कहने लगी तुम्हे याद है तुम कहा करत थे कि तुम जलत हुए कोयल जसा हो '

वह कहन लगा, 'मैं यह भी कहता था कि मैं कोयल को नहा आग की लपट का पकडना चाहता हू। लपट कभी पकडी नहा जाती, इसलिए म कुछ भी नही चाहता। मैंने कभी कुछ चाहा ही नहा, इसलिए जो और काई तुम्ह अच्छा लगा

लडकी तडप-सी गई। कहन लगी— तुमने कभी कुछ चाहा नहा था, इसलिए मैंने साचा जिसने चाहा वह ठीक था। पर सिफ किसी दूसरे का चाहना काफी हाता है '

'मैं तुम्हारे साथ लगती थी तो जलते कायल जसी हो जाती था, पर उसके साथ, किसी और क साथ लगकर मुझे लगा मैं बुझे हुए कोयल जसी हो गई थी

वह अब भी चुप था। उसका जिस्म भी अडोल था। पर उसकी

बाह काप-सी गई। बाह जैसे जिस्म का हिस्सा नही थी। और वह लडकी की पीठ के गिर्द एक सहारे की तरह लिपट गई।

"अब मैं सिर्फ जलता कोयला नही, आग की लपट हू"—लडकी ने सुलगकर और जलकर कहा।

वह हंस दिया। कहने लगा—"पर लपट कभी पडकी नही जाती।"

लडकी मे एक तपिश थी। कहने लगी—"वह बचपन था जब पकडी नही जाती थी। तुम लपट को चिमटे से पकडते थे। चिमटे से लपट नही पकडी जाती। लपट सिर्फ लपट से पकडो जाती है"

वह पैरो के तलुओ तक कांप-सा गया। और उसे लगा—उसके मन में से एक लपट निकलकर, उस लडकी के मन मे से निकलती लपट के साथ मिलती, उसे अपने हाथो में पकड रही थी ··

लडकी के होठो मे पता नही निकोटीन था कि शहद। जो भी था, उसको लगा, उसे उसीकी जरूरत थी।

और उन दोनो ने देखा, उनके पैरो के आगे जो सडक टूट गई थी, अब वह टूटी हुई नही थी।

❁ ❁ ❁